काय-ऊर्जा एवं उसकी
चमत्कारी सामर्थ्य

-श्रीराम शर्मा आचार्य

काय ऊर्जा एवं उसकी चमत्कारी सामर्थ्य

लेखक :

पं. श्रीराम शर्मा आचार्य

प्रकाशक

युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट

गायत्री तपोभूमि, मथुरा

फोन : (०५६५) २५३०१२८, २५३०३९९

मो. ०९९२७०८६२८७, ०९९२७०८६२८९

फैक्स नं०- २५३०२००

पुनरावृत्ति सन् २०१२ मूल्य : ७.०० रुपये

मनुष्य में हिलोरें लेता चुंबकीय महासागर

स्रष्टा ने मानवी काया में बीज रूप में वे सभी तत्त्व, पदार्थ, वैभव, पराक्रम एवं क्षमताएँ भर दी हैं जो विश्व-ब्रह्मांड के जड़ पदार्थों तथा चेतन प्राणियों में कहीं भी देखे-पाए जा सकते हैं। वह स्वयं में एक चलता-फिरता चुंबक है, उसकी विलक्षण काय-संरचना को एक अच्छा-खासा बिजलीघर कह सकते हैं, जिससे उसकी अपनी मशीन चलती और जिंदगी की गुजर-बसर होती है। इसके अतिरिक्त वह दूसरों को प्रकाशित करने से लेकर भले-बुरे अनुदान दे सकने में भी भली प्रकार सफल होता रहता है। चुंबक होने के नाते, वह जहाँ प्रभावित करता है, वहाँ स्वयं भी अन्यान्यों से आकर्षित किया और दबाया-घसीटा जाता रहता है।

मानवी चुंबकत्व का स्रोत ढूँढ़ने वालों ने अभी इतना ही जाना है कि वह पृथ्वी की गुरुत्वाकर्षण शक्ति से यह अनुदान उसी प्रकार प्राप्त करता है जैसे कि धरती सूर्य से। ब्रह्मांडव्यापी चुंबकत्व से भी उसका आदान-प्रदान चलता रहता है। इस ऊर्जा की मात्रा में न्यूनाधिकता होने तथा सदुपयोग-दुरुपयोग करने से वह आएदिन लाभ-हानि उठाता रहता है। अच्छा हो इस संबंध में अधिक जाना जाय और सफलतापूर्वक हानि से बचने तथा लाभ उठाने में तत्पर रहा जाय।

मनुष्य का मैगनेट घटता-बढ़ता रहता है। इसकी अल्पता से आँखों का विशेष आकर्षण समाप्त हो जाता है। शरीर रूखा, नीरस, कुरूप, निस्तेज, शिथिल सा दिखाई पड़ने लगता है, साथ ही मनुष्य को विस्मृति, भ्रांति, थकान जैसी अनुभूति होती है जबकि चुंबकत्व के आधिक्य से वह आकर्षक, मोहक एवं सुंदर लगने लगता है, उसकी प्रतिभा, स्मृति, स्फूर्ति जैसी विशेषताएँ उभरी हुई प्रतीत होती हैं। सत्संग और कुसंग के परिणाम भी व्यक्ति की निजी प्राण-ऊर्जा की न्यूनाधिकता के सहारे ही संभव होते हैं। बढ़े हुए चुंबकत्व वाला अपने से हलके वालों को प्रभावित करने में सफल रहता है, साथ ही यह बात भी है कि उससे बड़े स्तर की प्रतिभा

उसे अपनी पकड़ में कस लेती है। इतने पर भी कुछ मनस्वी ऐसे होते हैं, जो आत्मबल पर दृढ़ रहते हैं, आदान-प्रदान तो करते हैं किंतु अनिवार्य रूप से किसी-किसी से भी प्रभावित नहीं होते।

अंतरिक्ष में संव्याप्त भले-बुरे अनुदानों को मनुष्य अपने चुंबकत्व द्वारा ही स्वीकार-अस्वीकार करता है। इस शक्ति का ऊर्ध्वगामी प्रवाह मस्तिष्क में केंद्रित है। मस्तिष्क को मानवी चुंबक का उत्तरी ध्रुव कहा जाता है, उस मर्मस्थल के प्रभाव से व्यक्तित्व निखरता और प्रतिभाशाली बनता है। चेहरे के इर्द-गिर्द छाए ओजस 'तेजोवलय' को इस ऊर्ध्वगामी विद्युत का ही प्रतीक मानना चाहिए। जननेंद्रिय मूल में काया का दक्षिणी ध्रुव स्थित है। ऊर्जा का अधोगामी प्रवाह यहीं केंद्रित होता है—यौनाकर्षण के पीछे यही प्रवाह काम करता है। भिन्न प्रकृति के होते हुए भी दोनों प्रवाहों में परस्पर संबंध है। कामातिरेक और कामविकार पर अंकुश की प्रतिक्रिया को क्रमशः अधोगामी और ऊर्ध्वगामी प्रवाह की परिणति ही मानना चाहिए। प्राण-ऊर्जा का ऊर्ध्वगमन ही प्रखरता का द्योतक है।

सेनफ्रांसिस्को के प्रसिद्ध चिकित्साशास्त्री डॉ. अलबर्ट अब्राहम के अनुसार मानवी काया को चुंबकीय ऊर्जा तरंगों का भँवर कहा जाना चाहिए। उसमें भी पृथ्वी की भाँति उत्तरी और दक्षिणी ध्रुव होते हैं जो विद्युत एवं चुंबकत्व के नियमों के अनुसार काम करते हैं। शरीर द्वारा ऊर्जा तरंगों के निष्कासन एवं ग्रहण का कार्य सतत चलता रहता है। अपने अनुसंधान-निष्कर्ष में उन्होंने बताया है कि मनुष्य के शरीर से ८० अरब साइकल्स प्रति सेकंड की दर से विद्युत चुंबकीय ऊर्जा का विकिरण होता रहता है, जबकि आकर्षण क्षमता इससे कई गुना अधिक है। मस्तिष्क, हाथ-पैर की उँगलियाँ, नेत्र, जननेंद्रिय आदि से इन ऊर्जा तरंगों का सबसे अधिक निष्कासन होता है। डॉ. अब्राहम ने शरीर के विभिन्न अंगों से निकलने वाले इस ऊर्जा प्रवाह को मापने की एक विधि का विकास किया जिसे चिकित्सा विज्ञान में 'रेडिस्थेसिया' के नाम से जाना जाता है।

आधुनिक बायोमेडिकल साइंस की मान्यता के अनुसार मनुष्य का स्वास्थ्य शारीरिक कोशिकाओं के विभिन्न समूहों के मध्य चुंबकीय क्षेत्र

के सामंजस्य-संतुलन पर निर्भर करता है। शारीरिक संरचना में भाग लेने वाले विभिन्न तत्त्वों के अतिसूक्ष्म परमाणविक कण इलेक्ट्रान, प्रोटान, न्यूट्रान आदि विद्युत चुंबकीय ऊर्जा से परिपूर्ण होते हैं। लाल रक्त कणों में भी लोहे की प्रचुर मात्रा होती है, सारे शरीर में रक्त के निरंतर प्रवाहित होते रहने से एक निश्चित विद्युत प्रवाह बनता है। इस प्रवाह से चुंबकीय क्षेत्र उत्पन्न होता है, यही लौह तत्त्व विश्वव्यापी ऊर्जा का अवशोषण करके कोशिकाओं को विभिन्न कार्यों के संपादन के लिए ऊर्जा की पूर्ति करता है। स्वस्थ कोशिकाओं की शक्ति भंडारण क्षमता अधिक होती है। इसमें कमी होने पर शरीर रोगग्रस्त होने लगता है, जीवनीशक्ति क्षीण हो जाती है। इस प्रकार शरीर में निर्धारित परिमाण में चुंबकीय क्षमता का होना पूर्णतः विज्ञानसम्मत है।

लेनिनग्राड यूनिवर्सिटी रूस के अनुसंधानकर्त्ता मूर्द्धन्य वैज्ञानिकों ने डिटेक्टर के माध्यम से मनुष्य शरीर में स्थित जैव चुंबकीय क्षेत्रों का पता लगाया है। उनका कहना है कि किन्हीं-किन्हीं व्यक्तियों में ये क्षेत्र विशेष रूप से सक्रिय हो उठते हैं, जिससे उनके लिए कभी-कभी अनेक मुश्किलें पैदा हो जाती हैं। जोनी माइकेल एवं राबर्ट जे.एम. रिचर्ड ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'मीस्टिरियसफिनामिना' में इस तरह की अनेक घटनाओं का वर्णन किया है, जिसमें विभिन्न व्यक्तियों को चुंबकत्व की बहुलता के कारण विचित्रताओं का शिकार होना पड़ा।

कनाडा में कैरोलिना क्लेयर नामक एक ऐसी महिला थी, जिसमें शरीर चुंबकत्व की अधिकता थी। ओंटोरियो मैडिकल एसोसिएशन के जाँचकर्ता वैज्ञानिकों ने परखने पर पाया था कि जब वह आवेशित अवस्था में होती तो उसके शरीर से छुरी, काँटे, कीलें जैसी लौह धातुएँ चिपक जातीं। इसी तरह अमेरिका के मेरीलैंड की एक छात्रा लुई हैबर्गर की उँगलियों के अग्रभाग में चुंबकीय गुण था। आधी इंच मोटी, एक फुट लंबी लोहे की छड़ वह उँगलियों के पोरों से छूकर अधर में उठा लेती थी। धातुओं से विनिर्मित वस्तुएँ उसके हाथ से चिपककर जाती थीं। समीप आने वाले लोग उसमें एक विचित्र सा आकर्षण महसूस करते थे। मेरीलैंड कॉलेज ऑफ फार्मेसी के अनुसंधानकर्त्ताओं ने उसकी इस क्षमता को

जाँचा, परखा और हर तरह से सत्य पाया था। कंपास निडल उसके समीप रखने पर रुक जाती थी।

जोपलिन, मिसौरी के फ्रैंक मैक किन्स्ट्री नामक व्यक्ति के बारे में कहा जाता है कि जब वह चुंबकीय ऊर्जा से आवेशित होता तो चलते वक्त उसके पैर धरती से चिपक जाते, वह एक कदम भी आगे बढ़ने में असमर्थ हो जाता। ऐसी आकस्मिक स्थिति में राहगीर ही उसकी मदद करते, उसके पैरों को छुड़ाते तभी वह फिर से आगे बढ़ पाता।

मनुष्य में अपना चुंबकत्व तो है ही पर उसे न्यूनाधिक करने में उसके अपने प्रयत्न ही चमत्कार दिखाते हैं। सुप्रसिद्ध मन:शास्त्री विक्टर ई. क्रोमर का कथन है कि मन:शक्ति को केंद्रीभूत करके यदि इस शक्ति को किसी दिशा विशेष में प्रयुक्त किया जा सके तो बहिरंग में सम्मोहन प्रक्रिया दूसरों को तथा अंतरंग में स्वयं की सूक्ष्म शक्तियों को प्रभावित करने, जगाने में सफलंता मिल सकती है।

आस्ट्रिया के वियेना शहर में निवास करने वाले डॉ. फ्रांसिस्कम एंटोनियर्स नेस्मर को सम्मोहन विद्या का जनक माना जाता है। अपने समय के वे प्रख्यात चिकित्साशास्त्री थे। एक बार चिकित्सा करते समय एक रोगी के शरीर से अत्यधिक रक्त बहने लगा। मेस्मर के पास उस रक्त-प्रवाह को बंद करने की कोई औषधि नहीं थी, इस पर उनने उक्त स्थान पर अपना हाथ फिराना आरंभ किया। कुछ ही क्षणों में चमत्कारिक ढंग से रक्त का रिसना बंद हो गया, इससे प्रभावित होकर उन्होंने कई अन्य प्रयोग-परीक्षण किए और सफल रहने पर यह सिद्धांत प्रतिपादित किया कि मनुष्य के शरीर में एक प्रकार की बायोइलेक्ट्रोमैगनेटिक विद्युत धारा सतत प्रवाहित होती रहती है। यह प्रवाह उँगलियों के अग्रभाग से अधिक होता है जो रुग्ण स्थान पर हाथ फिराने से रोगी के शरीर में प्रवेश कर जाता है और रोग को दूर करने में सहायक सिद्ध होता है। मेस्मर ने इस शक्ति-प्रवाह को 'जैवचुंबक' नाम दिया। वान हैल्मांट ने इसी ऊर्जा शक्ति का शारीरिक एवं मानसिक रोगियों पर सफल प्रयोग करने में अच्छी ख्याति प्राप्त की थी। लोग उन्हें चमत्कारी सिद्धपुरुष कहने लगे थे।

वस्तुत: मैस्मेरिज्म के प्रयोगों में प्रयोक्ता द्वारा अपने चुंबकीय विद्युत के सहारे दूसरों को सम्मोहित करने की प्रक्रिया संपादित होती है। इसी माध्यम से एक व्यक्ति का प्राण दूसरे में प्रवाहित होने लगता है तथा शारीरिक रुग्णता एवं मानसिक अक्षमता को दूर करने में सहायक होता है। ऐसे अनेकों उदाहरण विद्यमान हैं, जिसमें प्रयोक्ताओं ने अपनी प्राणशक्ति से दूसरों को स्वास्थ्य-लाभ प्रदान किया।

जर्मनी के तानाशाह हिटलर का उसकी रुग्णावस्था में उपचार इस्टोनिया निवासी 'क्रिस्टन' नामक एक चिकित्सक करता था। उसकी उँगलियों में दरद दूर करने की चमत्कारिक क्षमता थी जिनके स्पर्श से वह रोगियों को चंगा कर देता था। अभ्यास के द्वारा ही उसने ऐसी जादुई क्षमता प्राप्त की थी। हिटलर के अंतरंग मित्र हिमलर तक ने उससे कई बार अपनी चिकित्सा करवाई और रुग्णता के पंजे से मुक्ति पाई थी। क्रिस्टन ने अपनी क्षमता का हिमलर पर सदुपयोग करके उसके माध्यम से हिटलर के मृत्युपाश में जकड़े हुए लगभग एक लाख व्यक्तियों को छुटकारा दिलाया था।

महामनीषी हिपोक्रेट्स को प्राणतत्त्व के प्रति असाधारण श्रद्धा थी। वे लिखते हैं, "शरीर आत्मा की शक्ति से संचालित एवं नियंत्रित होता है तो उसकी प्रचंड प्राणशक्ति से रोगों का निवारण भी संभव है।" स्कार्टलैंड के मैक्सवेल नामक विद्वान का भी विश्वव्यापी प्राणतत्त्व में अटूट विश्वास था। प्राण चिकित्सा प्रशिक्षण के लिए उन्होंने एक केंद्र तक खोल रखा था।

इस्कुलेपियस नामक एक यूरोपीय व्यक्ति अस्वस्थ व्यक्तियों के रुग्ण अवयवों पर साँस छोड़कर और हाथों से थपथपाकर चिकित्सा करने में पारंगत था। इंग्लैंड के पादरी डुइड को इस क्षेत्र में असाधारण ख्याति मिली थी। अनेक विद्वानों ने अपने साहित्य में उनकी इस विलक्षण क्षमता का वर्णन किया है। लंदन का लेन्हर्ट नामक माली उँगलियों से छूकर रोगमुक्त करने के लिए प्रसिद्ध था।

प्रख्यात परामनोविज्ञानी डॉ. थेल्मामॉस एवं उनके सहयोगियों ने ऐसे कई व्यक्तियों को जाँचा-परखा है जो सम्मोहन द्वारा प्राण चिकित्सा

करते हैं। उनमें से एक हैं किडनी स्पेशलिस्ट डॉ. मार्शल वार्ष्णेय, जिन्हें पाश्चात्य जगत में आध्यात्मिक चिकित्सक के रूप में प्रसिद्धि मिली हुई है। उँगलियों तथा हाथ के स्पर्श से वे अब तक सैकड़ों रोगियों को नवजीवन प्रदान कर चुके हैं। सिरदरद जैसी सामान्य बीमारियाँ उनके स्पर्श मात्र से दूर होती देखी गई हैं।

काया में सन्निहित प्राण चुंबकत्व की खोज विभिन्न वैज्ञानिकों ने अपने-अपने ढंग से की है और उसे बायोमैगनेटिज्म, बायोप्लाज्म, एक्टोप्लाज्म, बायोफ्लक्स आदि भिन्न-भिन्न नामों से संबोधित किया है। मनुष्य में इसका विशेष बाहुल्य होता है, जबकि वनस्पतियों एवं अन्य जीवधारियों में यह साधारण रूप से विद्यमान होता है। डॉ. किलियत एवं थेल्मामॉस जैसे वैज्ञानिकों ने किर्लियन तथा आर्गान फोटोग्राफी द्वारा इसके रंगीन चित्र भी खींचे हैं। थियोसोफिस्ट इसे 'ईथरिक डबल' कहते हैं, जो शरीर के चारों ओर आवरण के समान विद्यमान है। अतींद्रिय क्षमता वाली विशेषताएँ इसी चुंबकत्व पर निर्भर बताई गई हैं।

प्राण चुंबकत्व को विकसित एवं परिष्कृत करने के ध्यान-धारणा तथा प्राणायाम के कितने ही प्रयोग अपनी स्थिति एवं आवश्यकता के अनुरूप अपनाए जा सकते हैं किंतु उससे भी अधिक अनिवार्य यह है कि इंद्रियनिग्रह, मनोनिग्रह की नीति-निष्ठा, जीवनचर्या अपनाकर ईश्वरप्रदत्त प्राणविद्युत के अपव्यय से बचे रहने की सतर्कता बरती जाय। ❒

काया का सूक्ष्म वैज्ञानिक विवेचन

प्रकृति का अंतराल अपार विद्युत संपदा से भरा हुआ है। जब से मानव की अन्वेषण-बुद्धि जाग्रत हुई, उसने इस विपुल सामर्थ्य को जानकारी एवं सदुपयोग में स्वयं को लगाया तथा उसे अपना घनिष्ठ सहयोगी बना लिया। वैज्ञानिक बताते हैं कि पृथ्वी की तरह और वायुमंडल के आयनोस्फियर्स के मध्य लगभग तीन लाख वोल्ट की शक्ति का धन विद्युत विभव है, इसकी तुलना में पृथ्वी उतनी ही ऋण विद्युत से युक्त है। ५ वोल्ट प्रति मीटर की औसत से विद्युत का दबाव पृथ्वी के हर जीवधारी पर ६० किलोमीटर की ऊँचाई पर अवस्थित आयनोस्फियर की सबसे निचली परत से सतत बना हुआ है। यह भंडार कितना समर्थ व सशक्त है, उसकी कल्पना मात्र से वैज्ञानिक हतप्रभ हैं। यह भी एक सर्वविदित तथ्य है कि मानवी काया एक अच्छी विद्युत चालक है। ऊपर उल्लिखित विद्युत दबाव मानव शरीर में एक विद्युतधारा को प्रवाहित करता है, जिसका सूक्ष्मतम उपकरणों द्वारा मापन भी कर लिया गया है और यह लगभग १० पर ऋण सोलह घात एंपियर सेकंड प्रति वर्ग सेंटीमीटर बैठती है। मोटे अनुमान से लगभग दस पीको एंपियर की ताकत (एक एंपीयर का एक अरबवाँ भाग) का यह विद्युत प्रवाह नगण्य सा दिखाई पड़ता है, पर वस्तुत: तथ्य कुछ और ही है। यह कितना सामर्थ्यवान हो सकता है— इसकी चर्चा करने से पूर्व मानवी काया के कुछ अदृश्य सूत्रों की मोटी रूपरेखा जान लेना समीचीन होगा।

यहाँ जिस वैज्ञानिक विवेचन की चर्चा की गई है उसका आशय है—मनुष्य के इस सूक्ष्म काय-कलेवर की खोज जो विद्युत एवं चुंबकत्व के रूप में हर काया में विद्यमान है और जिसे घटा-बढ़ाकर मानवी काया को सामर्थ्यवान तथा परिस्थितियों के अनुकूल बनाया जा सकता है। यह विद्युत शक्ति ही जीवधारियों के शरीरसंस्थान व मन:संस्थान का मूल प्रेरकबल कहा जा सकता है। वैज्ञानिक तो मात्र उतना ही जान पाए हैं जितना मापा जा सका, पर ऐसा भी कुछ अदृश्य इस ढाँचे में विद्यमान है जो भौतिकी के सिद्धांतों के आधार पर अति सामर्थ्यशाली पावरहाउस के

रूप में सिद्ध किया जा चुका है। मानव शरीर को एक प्रकार का महासागर कह सकते हैं, जिसमें असंख्य नस-नाड़ियाँ नदी-नालों की तरह बहती हैं, श्वास-प्रश्वास के रूप में ज्वार-भाटे उठते रहते हैं। अब तो समुद्र में उठने वाले साइक्लोन्स व ज्वार-भाटों से भी विद्युत उत्पन्न करने की तकनीक खोज ली गई है, परंतु मानव शरीर एक मिनट में १५ से २५ बार जो श्वास-प्रश्वास लेता-निकालता रहता है उससे वायुमंडल से विद्युत आयनों का अंदर प्रवेश एवं उसके शक्तिशाली विद्युत संचार के रूप में सारे शरीर में प्रवाहित होने की जानकारी सनातन काल से मनीषियों को है। मस्तिष्क रूपी जेनरेटर और हृदय रूपी विद्युतोत्सर्जन केंद्र मिलकर जिस स्तर की ऊर्जा उत्पन्न करते हैं, वह सारे जीवकोशों में समान रूप से प्रवाहित होकर कुछ स्थान विशेषों पर प्रचुर मात्रा में विद्यमान पाई गई है। इस सूक्ष्म स्तर की विद्युत व चेतन स्तर की प्राणसत्ता का जब मिलन-संयोग होता है तो यही समन्वित स्वरूप व्यक्ति विशेष के आस-पास परिलक्षित होने वाले आकर्षण क्षेत्र के रूप में प्रकट होता है। यह एक सुविदित तथ्य है कि जहाँ विद्युत धारा प्रवाहित होती है, वहाँ चुंबकीय क्षेत्र का निर्माण होता है, इसी चुंबकीय क्षेत्र को 'आरा' या 'तेजोवलय' के नाम से पुकारते हैं।

यांत्रिक दृष्टि से तो चुंबक शब्द से सामान्य अर्थ लोहे के कणों को आकर्षित करने वाले चुंबक से किया जाता है जिसे 'मैगनेट' कहते हैं, पर उसकी चर्चा जब जीवधारियों के संदर्भ में होती है तो उसे ऐसी सचेतन विद्युत के अर्थ में प्रयुक्त करते हैं जो न केवल पदार्थ परमाणुओं को वरन वातावरण में अपने प्रवाह को फेंकती और सजातीय जीवधारियों को भिन्न-भिन्न प्रकार से प्रभावित करती पाई जाती है। यदि इस आणविक ऊर्जा-प्रवाह तथा चेतना में संव्याप्त प्राणतत्त्व के सम्मिश्रण से उत्पन्न ब्रह्मवचस की सामर्थ्य को किसी प्रकार मापा जा सके तो यह मानवी सत्ता की सबसे सशक्त विभूति-संपदा कही जा सकती है। आध्यात्मिक भाषा में जिसे तेजोवलय कहते हैं और योगियों-देवपुरुषों के आस-पास जो इस स्तर का चुंबकत्व पाया जाता है, वह इसी सामर्थ्य के कारण है। मनीषी बताते हैं कि वह वैयक्तिक चुंबकत्व विचारशक्ति के माध्यम से अपने

ऊपर, संपर्कक्षेत्र में तथा समस्त ब्रह्मांड में उत्पन्न होने वाले संक्षोभों के आधार पर अनुभव किया जा सकता है। इसी शक्ति के सहारे अतींद्रिय क्षमताएँ उभरती हैं और ब्रह्मांडीय चेतन प्राण-प्रवाह के साथ संपर्क मिलाते हुए सूक्ष्मजगत की गतिविधियों को समझ सकना संभव हो पाता है।

ब्रह्म की अंशधर जीवसत्ता का चिंतनपरक तथा संवेदनात्मक गतिविधियों का उभार एवं अवसाद इसी प्राणशक्ति पर निर्भर है, जो अपने सूक्ष्म रूप में प्राण-प्रवाह का स्वरूप लेकर जीवकोशों-ऊतकों से लेकर मस्तिष्क-सुषुम्ना के स्नायु सिनेप्सों तक तथा एंजाइम केमीकल्स के रूप में ग्रंथि उपत्यिकाओं तक इसी प्रकार संव्याप्त है जैसे समुद्र में घुला नमक। इस प्राणशक्ति की प्रखरता ही शरीर में चारों ओर वितरित-विस्तरित होकर मनुष्य को ओजस्वी बनाती है। मन:संस्थान में गतिमान होने पर उसे मनस्वी तथा अंत:करण में सक्रिय होने पर मनुष्य को तेजस्वी बनाती है।

ऐसे व्यक्ति जिनमें तीनों ही काया के स्तर समुचित रूप से प्रभावित हों—सक्रिय होते हैं। अपने आत्मतेज से समीपवर्ती वातावरण को भी प्रभावित करते हैं। इन आत्मबल संपन्न व्यक्तियों के समीप आने पर एक विचित्र सा आकर्षण-खिंचाव प्रतीत होता है। उनकी आँखों, वाणी, चेहरे की भाव-भंगिमाओं, हाथों-उँगलियों से मानो ऊर्जा का प्रवाह निरंतर गतिशील बना रहता है। महामानव, ऋषि, देवदूत, अवतारी महापुरुष ऐसे ही होते हैं, उनके समीपस्थ वातावरण ऐसा बन जाता है कि व्यक्ति नजदीक आने पर अपने अंदर भी उत्कृष्टता के भाव बढ़ते अनुभव करता है। इसके विपरीत अपराधी, छली, द्विमुखी व्यक्तित्व वाले हीन-निषेधात्मक चिंतन प्रधान, कामुक-लंपटों के चेहरे शरीर से एक अलग प्रकार का विकर्षण करने वाला (रिपेलिंग) प्रवाह निस्सृत होता है। ऐसे व्यक्तियों से दूर रहने को ही मन करता है, साथ ही आस-पास का वातावरण तक वे अभिशप्त बना डालते हैं। यह सारी मानवी विद्युत, चुंबकत्व, प्राण-प्रवाह से युग्म की न्यूनाधिकता की ही परिणति है।

यह एक अकाट्य तथ्य है कि हर व्यक्ति अपने इस चुंबकत्व को, ब्रह्मवर्चस को साधना-उपचारों के माध्यम से बढ़ाते रह सकता है। शरीर

में सतत प्रवाहित इस प्राण-प्रवाह का ही कमाल है कि व्यक्ति स्वयं को समर्थ, आत्मबल संपन्न अनुभव करता है। मानवी अंतराल की इस सूक्ष्म संरचना की जानकारी व कैसे इस प्रवाह को बढ़ाया जाय, इनका अध्यात्मशास्त्र के ग्रंथों में विशद रूप से विवेचन किया गया है। ओजस, तेजस, वर्चस को उभारने की विधाओं का ही साधना-उपक्रमों के माध्यम से ऊहापोह किया जाता है। ध्यानयोग, क्रियायोग, प्राणयोग इत्यादि की साधनाओं के माध्यम से जिन उपचारों का वर्णन व साधकों का मार्गदर्शन प्रस्तुत विशेषांकों में किया जा रहा है, वे इस आध्यात्मिक काय-कलेवर की क्षमता मानवी चुंबकत्व के संवर्द्धन से ही संबंधित हैं। यह उचित समझा गया कि साधकों को इस सूक्ष्म काय-कलेवर की भी जानकारी कराई जाय, जिसे माइक्रो-सटलर (अति सूक्ष्म) कहा जा सकता है व जिसकी विकृति से ही अदृश्य रूप में रोगों का आक्रमण तथा जिसके परिष्कार-संवर्द्धन से व्यक्तित्व में आकर्षण, ऋद्धि-सिद्धियों का प्रवेश संभव हो पाता है। यह सारी आध्यात्मिक संरचना पूर्णतः विज्ञानसम्मत है—सारे भौतिकीय व गणितीय प्रमाण इसकी पुष्टि भी करते हैं।

भूमंडल पर बैठा मनुष्य वातावरण से न जाने क्या-क्या अदृश्य प्रवाह ग्रहण करता व उन्हें विसर्जित करता रहता है। गामा, बीटा, लेसर, एक्स किरणों तथा इन्फ्रारेड व अल्ट्रा वायलेट स्तर की तरंगों की शक्ति वायुमंडल में काम करती रहती है। इन सबका ही समग्र समावेश मानवी काया में भी है। स्थूलशरीर तो पंचतत्त्वों में बँधा होने के कारण ससीम है, पर सूक्ष्मशरीर में इन शक्तियों की कोई सीमा नहीं। बाहर से एक जीवधारी नजर आते हुए भी इसी कारण मनुष्य असीम सामर्थ्यों का पुंज है। चूँकि वे प्रसुप्त पड़ी रहती हैं व उन्हें बाहर से ग्रहण करने का भी कोई आधार नहीं बन पाता। अतः सामान्यजन इस शक्ति-स्रोत का लाभ नहीं उठा पाते।

पृथ्वी पर जिस भूमंडलीय दबाव तथा विद्युत विभव के आकर्षण क्षेत्र में जीवधारी रहते हैं वैज्ञानिकों के अनुसार शरीररूपी जेनरेटर तथा मन:संस्थान की विद्युत को सक्रिय बनाए रखने के लिए वह अत्यधिक आवश्यक है। यह विशेषकर तब देखा गया जब अंतरिक्ष यात्रियों को पृथ्वी के वातावरण से दूर भेजा गया व उनमें स्फूर्ति का अभाव, निर्णय

लेने में अक्षमता व अत्यधिक शारीरिक थकान पाई गई। कृत्रिम रूप से अंतरिक्ष यानों के अंदर जब ऐसी परस्थितियाँ उत्पन्न की गईं जैसी पृथ्वी पर होती हैं, तब ये लक्षण समाप्त हो गए। इससे स्पष्ट होता है कि मानव जिस वातावरण में रहता है, वहाँ से विद्युत बल अपने अंदर अवशोषित कर निरंतर सक्रिय बना रहता है। प्रसिद्ध वैज्ञानिकद्वय डांडेनियल एवं काट वर्ग ने तो यह भी सिद्ध कर दिया है कि मानव का दीर्घजीवन तथा प्रजनन क्षमता अदृश्य बाह्य क्षेत्रों से आ रही विद्युत वर्षा पर निर्भर है। आज के आधुनिक युग में आयुष्य कम होने व नपुंसकता बढ़ने का कारण वे वातावरण की विद्युत में सतत कमी व मनुष्य की कृत्रिमता को अपनाने के कारण जो कुछ भी उपलब्ध है, उसे ग्रहण करने में अक्षमता बताते हैं।

इस विशाल विद्युत संधारक को, जिसके मध्य हम सब बैठे हैं वैज्ञानिक 'ग्लोबल केपेसीटर' कहते हैं—यह शांत नहीं बैठा रहता वरन उसमें प्राकृतिक हलचलें व विद्युत स्खलन निरंतर होता रहता है। इस 'केपेसीटर' से जो तरंगें निस्सृत होती हैं, उनकी मूल आवृत्ति लगभग ७-८ तरंगें प्रति सेकंड होती हैं। वे पृथ्वी सतह तथा आयनोस्फियर के बीच निरंतर गुंजायमान होती रहती हैं। इन तरंगों को 'शूमेन रेजोनेन्स' कहते हैं और यह एक अद्भुत साम्य है कि हमारे मस्तिष्क की विद्युत तरंगें इनसे हर गुण में मिलती-जुलती हैं। एक ही आवृत्ति (फ्रिक्वेन्सी) पर दोनों चलायमान हैं। श्री आर. ए. वेद ने तो अपनी पुस्तक 'दि सर केडियन रिदम्स ऑफ मैन' में यहाँ तक सिद्ध कर दिया है कि मनुष्य के रिद्म (क्रिया-कलाप) विद्युतीय क्षेत्रों और विद्युत चुंबकीय तरंगों से विशेष रूप से प्रभावित होते हैं तथा आस-पास के वातावरण को अपने अंदर चलायमान इन हलचलों से प्रभावित करने में भी पूर्णत: सक्षम होते हैं।

इसके अतिरिक्त मनुष्य जिस धरती पर रहता है, उसके गर्भ में एक प्रचंड प्रभावशाली विद्युतीय शक्ति क्षेत्र पाया गया है। प्रति वर्ग सेंटीमीटर एक एंपियर के लगभग प्रवाहित यह शक्ति धारा सारे पृथ्वी क्षेत्र में कुंडलाकार व्याप्त होने के कारण कई गुना हो जाती व चुंबकीय विद्युतीय

तूफानों का रूप ले लेती है और मानवी काया के हर अंग-अवयव को जीवकोशों, रक्तकोशों तथा चक्र-उपत्यिकाओं को प्रभावित करती है। रूस में इस दिशा में परामनोवैज्ञानिक शोधों ने बताया है कि अतींद्रिय क्षमता का जागरण बहुत कुछ अपने अंदर के प्रवाह का इस चुंबकीय धारा से साम्य बिठाना संभव है।

ऊपर वर्णित गूढ़ वैज्ञानिक विवेचन का सार समझने का प्रयास करें तो हम कुछ निष्कर्षों पर पहुँचते हैं। ब्रह्मांड में इलेक्ट्रोमैगनेटिक सत्ता विद्यमान है जो ग्रह-नक्षत्रों की भ्रमणशीलता और आकर्षण शक्ति के उभयपक्षीय प्रयोजन तो पूरा करती ही है, साथ ही अणु जगत की हलचलों के लिए भी जिम्मेदार होती है। ईथर के ब्रह्मांडव्यापी महासागर पर इसी विद्युत चुंबक का आधिपत्य छाया है। यह जड़ शक्ति नहीं है वरन प्राणशक्ति का प्रवाह है। अणु-परमाणुओं की संरचना व गतिविधियों के रूप में हर जीवधारी के अंदर वह दृश्यमान होती है।

यह प्राण एक चेतन ऊर्जा है जो मनुष्य में काया के इर्द-गिर्द फैली दिखाई देती है, इसे ही तेजोवलय कहते हैं। विश्वव्यापी महाप्राण के वैभव भंडार से हर जीवधारी अपनी-अपनी पात्रता के अनुसार इसे पाते रहते हैं। यह मानव के लिए ही सहज संभव है कि वह प्रयत्न करे, उत्साह सँजोए और संकल्पबल के माध्यम से इस समष्टिगत प्राण-प्रवाह को अधिकतम अपने अंदर खींच सके।

इस प्राण-चुंबक को काया में प्रविष्ट कर कैसे प्रयोग किया जाता है ? उसे जानने से पूर्व मानवी काया की संरचना की भी थोड़ी जानकारी कर ली जाय। मनुष्य शरीर लगभग ७५ हजार अरब कोशों का समन्वय है। हर जीवकोश के आर-पार ६० से ९० वोल्ट का विद्युत विभव होता है। इस प्रकार मानव शरीर एक शक्तिशाली साधन संपन्न बिजलीघर है। हर अवयव की गतिविधि, हृदय की धड़कन, मांसपेशियों का आकुंचन-प्रकुंचन, मस्तिष्क में संदेशों व प्रेरणाओं का आवागमन, अंतःस्रावी ग्रंथियों से रस-स्रावों का उत्पादन आदि इसी विद्युत के क्रिया-कलाप हैं। वैज्ञानिक बताते हैं कि प्रत्येक मनुष्य अपने वायुमंडल से ऋण विद्युत आयनों को श्वास द्वारा सोखता रहता है। ये आयन (विद्युत आविष्ट कण) रक्त के

माध्यम से शरीर के सभी भागों में फैलकर समस्त ऊतकों और कोशों को ऋण विद्युत से संतृप्त कर देते हैं। ये विद्युत आयन त्वचा से निष्कासित हो वातावरण में फैल जाते हैं। इस प्रकार वैज्ञानिक फ्रेडब्लेस के अनुसार शरीर में एक विद्युतचक्र सतत चलता रहता है।

सुषुम्ना को वैज्ञानिक स्थायी विद्युतीय द्विध्रुव केंद्र (परमानेंट इलेक्ट्रिक डाइपोल) मानते हैं, इसका निचला भाग जो मूलाधारचक्र में अवस्थित है। (कावा इक्वाइना स्थित) ऋण विद्युत आवेशयुक्त तथा ऊपरी सिरा सहस्रार (सेरिब्रम स्थित) धन विद्युतधारी है। असामान्य स्थिति में यह प्रवाह नीचे से प्रबल होकर उलटी दिशा में अर्थात ऊपर की ओर ऊर्ध्वगमन करता बह सकता है व मस्तिष्क को सतत जाग्रत व अति सामर्थ्यवान बनाए रख सकता है—वैसे सामान्यत: जीवधारियों में इसका प्रवाह ऊपर से नीचे होता है। मात्र मनुष्य को यह सुविधा प्राप्त है कि वह प्राण प्रहार विद्युत केंद्रीकरण के माध्यम से लोअर पोल को सशक्त बनाकर अपने प्रवाह को क्षरण से रोककर ऊर्ध्वगमन की ओर दौड़ा दे। वैज्ञानिकों का चिंतन अभी इस विषय में और भी संभावनाओं को लेकर गतिशील है और अध्यात्म विज्ञान तो इन मान्यताओं को पहले से ही प्रतिपादित करता आया है कि ओजस का संग्रह किया जाता है व यही मन:शक्ति-संकल्पबल को बढ़ाकर मनुष्य के तेजोवलय को प्रभावशाली बना देता है। यह 'ऑरा' और कुछ नहीं त्वचा से, आँखों से, वाणी से सतत प्रवाहित होते रहने वाला विद्युत-प्रवाह ही है।

शरीर में कुल मिलाकर १ लाख वोल्ट प्रति सेंटीमीटर का विद्युत दबाव होता है। अन्य जीवधारियों की भाँति यह भी श्वास से, त्वचा से, जननेंद्रियों से क्षरित हो—वातावरण में बहता रहता है। यदि इस विद्युतधारा को सुनियोजित किया जा सके तो इसी से उस चुंबकत्व का निर्माण किया जा सकना संभव है, जो व्यक्ति को आकर्षक शक्ति-संपन्न बनाता है। मन:क्षेत्र में यही साहस, विवेक, संतुलन आदि गुणों के रूप में तथा अंत:क्षेत्र में संवेदनाओं, आत्मबल, ओज के रूप में विकसित होकर समीपवर्ती लोगों पर गहरी छाप छोड़ता है—ऐसे व्यक्तियों का लोग अनुगमन करने को बाध्य होते हैं।

ध्रुवीय प्रदेशों में जिस प्रकार चुंबकीय तूफानों का प्रकाश 'अरोरा बोरिएलिस' के रूप में छाया रहता है, उसी प्रकार महापुरुषों का चुंबकत्व, विद्युत ऊर्जा के प्रकाशवलय के रूप में उनके चतुर्दिक व्याप्त रहता है। यह प्रकाशवलय भी आंतरिक चुंबकत्व व विद्युत-प्रवाहों के अनुरूप भिन्न-भिन्न होता है। तत्त्वदर्शी, मनीषी किसी व्यक्ति के चतुर्दिश व्याप्त इसी तेजोवलय से उसका आतंरिक चेतना स्तर व अंतःकरण में जन्म ले रही प्रवृत्तियों की झाँकी देख लेते हैं।

काया का सूक्ष्म रहस्यलोक

मनुष्य का जो कुछ भी दृश्यमान रूप है, वही सब कुछ नहीं है। जो अदृश्य है, अगोचर है, इंद्रियातीत है वह और भी विलक्षण है। विद्युत चुंबकीय तरंगों एवं स्नायु रसायनों की ऐसी अविज्ञात दुनिया मानवी काया में विद्यमान है, जिसका प्रकटीकरण उसे असामान्य बनाने की सामर्थ्य रखता है। आर्ष ग्रंथों की मान्यताओं को एक 'थ्योरम' मानकर एक गणितज्ञ की तरह यदि हम विज्ञान के समीकरण द्वारा उसे हल करने का प्रयास करें तो संभवतः यह अधिक श्रेयस्कर होगा। पूर्वाग्रहों से मुक्ति हेतु, अंतः सत्ता के रहस्यों पर से परदा हटाने के लिए इससे इतर तर्कसम्मत कोई और मार्ग है भी नहीं। ईशोपनिषद् का ग्यारहवाँ मंत्र कहता है— "जो विद्या और अविद्या को एक साथ जानता है, वह अविद्या द्वारा मृत्यु को जीतता है और विद्या द्वारा अमृत्व अनुभव करता है।" वस्तुतः अंतर्जगत से संबंध बनाए रखते हुए विज्ञान के अध्ययन की यही सही तकनीक है।

चर्चा मानवी अंतराल के अदृश्य पक्ष की जानकारी के विषय में चल रही है, जिसे एक प्रकार से चेतना का सूक्ष्मीकृत रूप भी कह सकते हैं। जींस एवं न्यूरोपेप्टा इड्स की खोज करने वाले विज्ञान-विशारदों ने कुछ सूक्ष्म रसायनों में मनुष्य के प्राण शरीर की संरचना को खोज निकाला है। उनका कथन है कि मानवी काया के लगभग सभी ऊतकों में अति सामर्थ्यशाली स्थायी विद्युत क्षेत्र पाया जाता है। ये विद्युत क्षेत्र मस्तिष्क में तंत्रिका कोशों को एवं सारे शरीर के स्नायुकोशों व जीवकोशों की झिल्लियों की संवेदनशीलता को प्रभावित कर काया को विद्युतपुंज बना देते हैं। सारे

क्रिया-कलाप इनकी उत्तेजना से उत्सर्जित होने वाले न्यूरोपेप्टाइड्स से संचालित होते हैं जिनकी मात्रा अत्यल्प होती है।

विद्युत संपदा से भरी-पूरी यह काया द्विधुरीय चुंबक की भूमिका निभाती है, जिसका उत्तरी ध्रुव मस्तिष्क में एवं दक्षिणी ध्रुव मूलाधार में अवस्थित होता है। वैज्ञानिकों का कथन है कि स्रष्टा की कुछ विधि-व्यवस्था ऐसी है कि यह ध्रुवीकरण की प्रक्रिया जो कि ठीक पृथ्वी की भाँति होती है, उस समय से शुरू हो जाती है, जबकि उसका अस्तित्व मात्र एककोशीय निषेचित डिंबाणु के रूप में होता है। ध्रुवीकरण के पश्चात ही माइटोसिस मिओसिस विभाजन के माध्यम से भ्रूण के द्रुतविकास का कारण बनता है। जब बच्चा जन्म लेता है तो भी वह एक डाइपोल मैगनेट होता है एवं सूक्ष्म छायांकन द्वारा 'हैलो' अर्थात आभामंडल को मस्तिष्क एवं मूलाधार (मल-मूत्र छिद्रों का मध्य भाग) के आस-पास घनीभूत देखा जा सकता है। बैटरी एक 'इलेक्ट्रिक डाइपोल' जिनके दोनों सिरों पर विपरीत गुणधर्मिता समुचित मात्रा में देखी जा सकती है। काया के सहस्रार रूपी मस्तिष्क स्थित तथा ध्रुव चेतनसत्ता के सशक्त केंद्र माने जा सकते हैं, जिनसे सूक्ष्मजगत का सारा व्यापार चलता रहता है।

जीवन जहाँ से आरंभ होता है, उस एककोशीय निषेचित डिंबाणु के विषय में अमेरिका की येल यूनिवर्सिटी के डॉ. सेक्सटन बर्र ने अपनी एक पुस्तक 'दी फील्ड्स ऑफ लाइफ' (जॉन बिली १९७२) में लिखा है, ''इन कोशों के दोनों ध्रुवों के मध्य विद्युत विभव का जो अंतर पाया जाता है, व जिस कारण यह एक द्विध्रुवीय चुंबक (डाइपोल मैगनेट) की भूमिका निभा पाता है, वह अकल्पनीय है। इतना विद्युत विभव इतने सूक्ष्म कण में होना यह बताता है कि काया विद्युतपुंज है एवं भावी जीवन में भी इसकी सारी गतिविधियाँ उसी प्रकार संचलित होनी हैं।''

वे आगे लिखते हैं, ''शुक्राणु की संरचना में यह ध्रुवीकरण इतना स्पष्ट होता है फिर भी सामान्यतया उसकी ओर हमारा ध्यान नहीं जाता। शुक्राणु का सिर एक ध्रुव है जो नाभिक को धारण करता है एवं सूचना केंद्र है। पूँछ दूसरा ध्रुव है जो सूचना को अपनी ऊर्जा द्वारा गंतव्य स्थान तक

पहुँचाता है। सूचना केंद्र व ऊर्जा स्रोत रूपी ये ध्रुव ही अंतत: जीवकोश में आर.एन.ए. डी.एन.ए. का रोल सँभाल लेते हैं।''

''भ्रूण विकास की एवं उसके शरीर रूप में विकसित होने की सारी कुंजी संभवत: उन विद्युत धाराओं में छिपी पड़ी है जो निरंतर विकसित हो रहे भ्रूण में दोनों के बीच सतत बहती रहती है। 'साइंस' (अमेरिकन एसोसिएशन फार एडवांसमेंट ऑफ साइंस की शीर्ष पत्रिका) के मार्च १९८१ के प्रथम अंक में डॉ. जीन मार्क्स अपना यह अभिमत व्यक्त करते हुए कहते हैं, ''प्रयोगशाला में संपन्न होने वाली 'इलेक्ट्रोफोरेसिस' प्रक्रिया की ही तरह सारे शरीर के समस्त जीवकोशों में यह विद्युत धारा का प्रवाह जारी रहता है। यहाँ तक कि रक्त व अन्य रस द्रव्यों में परिभ्रमण करने वाले घुमक्कड़ कोश जो जीवनीशक्ति के लिए उत्तरदायी माने जाते हैं एवं श्वेतकण भी विद्युत उत्तेजन से रसस्राव कर अपना कार्य करते देखे जा सकते हैं।''

सबसे अधिक कार्य इस क्षेत्र में हृदय के पेसमेकर एवं 'कंडक्टिंग टीश्यू' जिससे उसकी सारी पंपिंग गतिविधि संचालित होती है, पर हुआ है। इसके अतिरिक्त सुषुम्ना व साथ-साथ चलने वाली सिंपेथेटिक एवं पैरा सिंपेथेटिक गैंगलियानों की मंडली में भी इस विद्युत लीला को सूक्ष्मदर्शी यंत्रों से देखा जा सकता है। पाया गया है कि विद्युत आवेशधारी कैल्शियम के आयन्स का कोश (स्नायु अथवा गैंगलियान्स अथवा कंडक्टिंग टीश्यू) से बाहर आना-जाना ही विद्युत विभव पैदा करके कोश को एक विद्युत चुंबक बनाने की अहम भूमिका निभाता है।

पृथ्वी के चुंबकत्व की बल रेखाएँ ब्रह्मांड से आतीं व उत्तरी ध्रुव से प्रविष्ट हो दक्षिणी ध्रुव से बाहर निकल जाती हैं। ब्रह्मांडीय किरणों (कॉस्मिक रेज) का भी सर्वाधिक आदान-प्रदान पृथ्वी के ध्रुवों पर ही होता है। सौर किरणें जब विद्युत आवेश धारण कर सैकड़ों किलोमीटर प्रति सैकंड की गति से पृथ्वी की ओर आती हैं तो उत्तरी ध्रुव पर ही उसका संग्रहण होता देखा जाता है जबकि दक्षिणी ध्रुव पर उनकी दिशा पृथ्वी से बाहर जाती हुई दृष्टिगोचर होती है। दक्षिण ध्रुव पर ऊष्मा का सर्वाधिक उत्सर्जन होता देखा जाता है एवं उत्तरी ध्रुव पर संव्याप्त पर्यावरण

प्रदूषण को बड़े अचंभे से दक्षिणी ध्रुव पर एकत्र हुआ देखा जाता है, मानो पृथ्वी ने उन्हें निष्कासित कर परे फेंक दिया हो। ये सारे उदाहरण उस ध्रुवीकरण को समझाने के लिए दिए जा रहे हैं जो सहज रूप में इस मानवी काया में सँजोया रखा है। इसके क्रमशः विकसित होने एवं विद्युत चुंबकत्व द्वारा हर जीवकोश में इसके संव्याप्त होने के प्रसंगोपरांत इन दोनों ध्रुवों को भी समझ लिया जाय जिन्हें बहिरंग में आभामंडल के रूप में प्रकाशित हुआ बताया गया है।

सुषुम्ना नाड़ी (स्पाइनल कार्ड) शरीर की सबसे सामर्थ्यवान विद्युत संपदा से भरी संरचना है जो मस्तिष्क के स्नायु प्रवाह को अंग-प्रत्यंग तक एवं ज्ञान तंतुओं से मस्तिष्क तक वांछित संदेश पहुँचाने का कार्य एक सेकंड के हजारवें भाग में करती है। इस नाड़ी की संरचना कोलेजन ऊतकों से हुई जो कि घनीभूत प्रोटीन अणुओं का समुच्चय है। इसका ऊपरी सिरा धन आवेशधारी तथा निचला ऋण आवेगमय है। स्नायु संरचना की दृष्टि से सुषुम्ना यहाँ एक जालीनुमा गुच्छक बनाती हुई मस्तिष्कीय परतों में अंडाकार वृत के रूप में रेटीकुलर एक्टीवेटिंग सिस्टम के नाम से फैल जाती है। सारी विद्युत संपदा यहीं घनीभूत रहती है। अधिक गहरे में होने एवं अति सूक्ष्म स्थिति में होने के कारण तथा इसके आवेशों के परस्पर निरस्तीकरण (नलीफिकेशन) की वजह से इलेक्ट्रो एनेसेफेलोग्राफी जैसे यंत्रों से इन विद्युत तरंगों को सही अवस्था में मापा जाना असंभव है। यही कारण है कि ई. ई. जी. को मस्तिष्क का तेरह प्रतिशत प्रतिनिधि करने वाला मापन मात्र माना जाता है। योग साहित्य में इस सारे विद्युतमंडल तथा 'पीनियल हाइपोथेलेमस पिट्यूटरी' रूपी स्नायुधारा व रस-स्रावों के समुच्चय को सहस्रारचक्र की उपमा दी गई है, जहाँ पर पृथ्वी के उत्तरी ध्रुव की ही तरह सूक्ष्मजगत के अनुदान बरसते हैं। चेतनसत्ता का पारस्परिक आदान-प्रदान इसी ध्रुव के माध्यम से होना बताया गया है। देवाराधन द्वारा वस्तुतः प्रामाणिकता सिद्ध कर जीवनसत्ता ब्राह्मी चेतना से अपने अनुदान इसी उत्तरी ध्रुव से ग्रहण करती एवं सामर्थ्यानुसार उन्हें पहुँचाती हुई शेष को दक्षिणी ध्रुव अर्थात मूलाधार से निष्कासित करती रहती है।

ब्रह्मांडीय ऊर्जा प्रवाह जिस प्रकार पृथ्वी के उत्तरी ध्रुव से टकराकर आभामंडल विनिर्मित करता हुआ भूमध्य भाग से दक्षिण ध्रुव से निस्सृत हो जाता है, लगभग उसी प्रकार काया के इस डाइपोल मैगनेट सुषम्ना के सर्वोच्च अधिष्ठाता केंद्र ब्रह्मरंध्र एवं सहस्रार से टकराते हुए व्यक्ति विशेष की जाग्रत अंत:स्थिति एवं साधना अर्जित उपलब्धियों के अनुरूप एक विशिष्ट प्रभामंडल बनाता है एवं उछाल खाता हुआ मेरुदंड मार्ग से गुजरता हुआ मूलाधार से अधोगामी हो काया से बहिर्गमन कर जाता है। मूलाधार एक कुंड है, सहस्रार एक दुर्गम पर्वत जिसकी उपमा कैलाश से दी जा सकती है। दोनों की समस्वरता ही आत्मा-परमात्मा का मिलन, ब्रह्मानंद की रसानुभूति है।

प्रश्न पूछा जा सकता है कि जिस प्रकार ध्रुव प्रभा को उत्तरी ध्रुव पर अनेकानेक वर्णों-विलक्षणताओं के रूप में देखा व चित्रांकित किया जा सकता है, क्या उसी प्रकार मानवी काया के प्रभामंडल को देखा-परखा नहीं जा सकता। शास्त्रों में तो विभूतियों के अनुरूप भिन्न-भिन्न देवताओं को आकृतियों के चहुँओर आभामंडल (हैलो) दरसाया जाता है। इस प्रकाश वृत को वैज्ञानिकों ने महत्ता दी है एवं फोटोग्राफी के विशिष्ट प्रयोगों के माध्यम से उसका छायांकन करने में भी सफलता प्राप्त की। चेतना को सूक्ष्म संरचना की दिशा में यह एक महत्त्वपूर्ण शोध उपलब्धि है। 'साइकिक डिसकवरीज बिहाइंड आइरन करटेन' एवं बाद में इसके द्वितीय भाग में किर्लियन फोटोग्राफी संबंधी कार्य प्रकाशित हुआ है।

कुछ दिनों 'मद्रास मेडीकल कॉलेज' के स्नायुविज्ञानी डॉ. नरेंद्रन ने पत्तियों, उँगलियों की पोरों के आभामंडल से आगे बढ़कर समस्त शरीर का आभामंडल अंकित करने में सफलता प्राप्त की है। मानवी ऊष्मा को 'थर्मोग्राम' द्वारा तथा विद्युत चुंबकत्व को 'इलेक्ट्रो मैगनेटोग्राम' द्वारा माप सकने में तो पिछले एक दशक में वैज्ञानिकों को काफी सफलता मिली है लेकिन समग्र सूक्ष्म आयनमंडल को माप लेना एक भारी उपलब्धि है।

डा. नरेंद्रन का कथन है कि यह ऑरा प्राणशक्ति से भरी-पूरी जीवसत्ता में तेजोमय, गतिशील एवं ज्योतिर्मय होता है जिसे एक विशेष प्रविधि द्वारा फोटोग्राफिक प्लेट पर अंकित किया जा सकता है। निर्जीव

वस्तुओं, वृक्ष-वनस्पतियों में भी यह विद्यमान होता है, पर इसकी ज्योति (इन्टेन्सीटी) कम होती है। मानवी काया से निरंतर उत्सर्जित प्राण-ऊर्जा का विकिरण मापने के लिए जितने 'हाई वोल्टेज प्रोजेक्शन रिकार्डिंग' की आवश्यकता पड़ती है, उसे देखते हुए सन् १९४९ में डॉ. किलनर द्वारा बनाए गए उपकरण को काफी कुछ संशोधित कर इस भारतीय चिकित्सक ने शास्त्रवचनों एवं प्रकृति साहित्य का अनुमोदन करने की आत्मिकी दिशा में काफी कुछ योगदान दिया है। उनका कथन है कि निषेधात्मक एवं विधेयात्मक चिंतन को, भावी व्याधि की संभावना वाले एवं शीघ्र ठीक होने वाले व्यक्ति के अयन मंडल को स्पष्टतः अंकित कर यह निर्धारण किया जा सकता है कि चिकित्सकों की मनोरोग विशेषज्ञों को भावी दिशाधारा क्या हो? इसे उन्होंने अतींद्रिय ज्ञान नहीं अपितु अविज्ञात आयाम की खोज कहा है जिसे विज्ञान लेसर, मेसर एवं होलोग्राफी के माध्यम से जानता तो था, पर विस्मृति की विडंबना से ग्रसित भी था।

डाइसाइनीन स्क्रीन का प्रयोग कर डॉ. किलनर ने यह बताया था कि जैसे मानव शरीर से जीवकोश झड़ते हैं, ठीक उसी प्रकार आइन्स आस-पास के वातावरण में सतत गतिशील रहते हैं। अपनी पुस्तक 'ह्यूमन एटमॉसफियर' में डॉ. किलनर ने लिखा है, "सूक्ष्मतम होने के कारण ही ये आँखों से नहीं दीखते, लेकिन दिव्यशक्ति सामर्थ्य संपन्न व्यक्ति न केवल इस सूक्ष्म आभामंडल को अपितु भूत, वर्तमान, भविष्य को भी इसके माध्यम से जान लेते हैं।"

आभामंडल या ऑरा का जानने-समझने की वैज्ञानिक तकनीक एवं वास्तविक आभामंडल की शास्त्र मान्यताएँ, अन्यान्य प्रतिपादन आगामी लेखमालाओं में प्रस्तुत की जाती रहेंगी। अभी तो सूक्ष्मीकरण के प्रसंग में इतना ही कहना अभीष्ट होगा कि वैज्ञानिक उस स्थिति तक पहुँच गए हैं, जहाँ वे कह सकें कि 'लिफाफा देखकर हम मजमून पहचान लेते हैं।' भले ही यह जानकारी अत्यल्प हो, एक रहस्यलोक का द्वार तो खोलती है।

काया की चेतनसत्ता जितनी विलक्षण एवं सूक्ष्म है, उतनी ही स्रष्टा की अद्‌भुतता की परिचायक भी। इस महासागर में जो जितनी डुबकी लगाता है, उतनी ही रत्नराशि उपलब्ध करता है। ❐

चेतना सत्ता के पाँच महत्त्वपूर्ण आयाम

पिंड रूप में समष्टि चेतनसत्ता के घटक का मानवी काया के स्थूल दृश्यमान रूप को सभी जानते हैं। बहुरंगी, बहुमुखी क्रिया-कलाप नजर आने के कारण उसकी महत्ता भी सबकी समझ में आती है। यही कारण है कि किसी अंग-अवयव के व्याधिग्रस्त होने पर लोग-बाग दौड़-धूप करते व भाँतिभाँति के उपचारों में लगे देखे जाते हैं। आत्मिकी का सारा ढाँचा इस स्थूल दृश्यमान काय-कलेवर पर नहीं, अपितु सूक्ष्म रूप से क्रियाशील चेतना की विभिन्न परतों पर अवलंबित है, उन्हीं से विनिर्मित है। वे प्रत्यक्ष नजर तो नहीं आतीं पर स्फुट रूप से अपनी गतिविधियों की एक झलक-झाँकी स्थूल काया के माध्यम से दरसाती रहती है।

अस्तु, अध्यात्म क्षेत्र में प्रवेश करने वाले अथवा ब्राह्मी चेतना से संपर्क स्थापित कर उस विराट की खोज हेतु उत्सुक जिज्ञासुओं के लिए यह अनिवार्य हो जाता है कि उस सूक्ष्म चेतनसत्ता की संरचना, विलक्षणता एवं क्रिया-कलापों को भलीभाँति समझें। इस संदर्भ में यह भली प्रकार समझ लिया जाना चाहिए कि स्थूल से सूक्ष्म की संगति बिठाने का जो प्रयास किया जाता है, वह प्रत्यक्षवादी तथ्यान्वेषी बुद्धि के लिए समाधानपरक संकेत मात्र है। आत्मसत्ता की प्रयोगशाला में कार्यरत योगसाधकों को इन संकेतों के माध्यम से समझने की आवश्यकता नहीं पड़ती। वे स्वयं पर प्रयोग कर इसे प्रत्यक्ष कर दिखाते हैं। प्रदर्शन से अधिक महत्त्वपूर्ण है— अनुभूति। जो इन सूक्ष्म चेतन परतों को एक-एक कर अनावृत करते हैं, वे क्रमशः उसी अनुपात में लाभान्वित होते, विराट सत्ता से तादात्म्य स्थापित करते देखे जा सकते हैं।

मानवी काया में जिन पाँच सूक्ष्म चेतन परतों के अस्तित्व की चर्चा की जाती है, वे इस प्रकार हैं—हारमोन्स एवं एंजाइम्स के रूप में क्रिंयाशील अन्नमयकोश, जैव विद्युत के रूप में क्रियाशील द्वितीय प्राणमयकोश, जैव चुंबकत्व के रूप में क्रियाशील तृतीय मनोमयकोश, स्नायुरस स्रावों

(न्यूरोह्यूमरल सिक्रीशन्स) के रूप में सक्रिय चतुर्थ विज्ञानमयकोश एवं रेटिकुलर एक्टीवेटिंग सिस्टम तथा कार्टिकल न्यूकलाई के रूप में विद्यमान आनंदमयकोश। पंचकोश के संदर्भ में स्थूल दृष्टि से कार्य कर रहे, अपनी उपस्थिति का बोध कराते जिन एनाटामिकल संरचनाओं की चर्चा की जा रही है, वे उसी स्थान पर गतिशील हों, यह बात नहीं। इन्हें इलेक्ट्रॉन माइक्रोस्कोप इत्यादि के माध्यम से पिनपाइंट भी नहीं किया जा सकता। मात्र इसकी परिणतियों-स्थूल प्रतिक्रयाओं से जागरण की फलश्रुति को जाना-पहचाना जा सकता है।

यों पिचहत्तर हजार अरब जीवकोशों के समुच्चय से बनी मानवी काया में अनेक स्वतंत्र शक्तियाँ क्रियाशील रहती हैं। न्यूक्लीय अम्लों, जीन्स एवं क्रोमोसोम के रूप में कार्यरत प्रजनन एवं आनुवंशिकी रूपी सृजनात्मक शक्ति उन्हीं में से एक है। जैव विद्युत एवं जैव चुंबकत्व से ही जुड़ी हुई एक और शक्तिपुंज है, जीवनीशक्ति के रूप में। प्रतिरोधी संस्थान के रूप में विद्यमान यह संरचना शरीर की प्रतिकूलताओं से जूझने की सामर्थ्य-प्राणशक्ति का एक संबल है। सभी ऐसे हैं जिन्हें स्थूल रूप से रक्त में, स्नायुरस स्रावों में, टीश्यू हिस्टोलॉजी के माध्यम से एवं इलेक्ट्रोमीटर, इलेक्ट्रोएनसेफेलोग्राफ,मैगनेटोग्राफ,रेडियो इक्यूनोएसे इत्यादि माध्यम से जाँचा-मापा जा सकता है। यह स्मरण रखा जाना चाहिए कि ये मात्र सूक्ष्म की स्थूल में दृश्यमान प्रतिक्रियाएँ हैं। अमुक व्यक्ति में उपरोक्त शक्तिपुंजों का होना यह प्रमाणित नहीं करता कि वह उच्चतस्तरीय साधक है। परंतु उनके परिमाण, प्रखरता समुच्चय में अभिवृद्धि—यह संकेत देते हैं कि सूक्ष्म आध्यात्मिक काय संरचना में क्रमशः जाग्रति आ रही है व इसके परिणामस्वरूप चमत्कारी फलश्रुतियाँ प्रकट होने की संभावनाएँ हैं।

कुंडलिनी जागरण, षट्चक्र भेदन, योगत्रयी, पंचकोश जागरण, सूक्ष्मीकरण इत्यादि सभी साधनाओं में अनेकों दृष्टि से साम्य है। इन सभी में स्थूल चेतना को सूक्ष्म बनाया एवं ध्यानयोग के माध्यम से उसका सुनियोजन किया जाता है। माध्यम कुछ भी हो लक्ष्य एक ही है—अंतः की प्रसुप्त सामर्थ्य का उभार, जागरण, उन्नयन। यह कैसे संभव हो पाता है, इसे सूक्ष्म संरचना के परिप्रेक्ष्य में समझा जाना चाहिए। यह विवरण

गुह्य है, रहस्यमय है एवं रोचक भी। विशेषकर इस क्षेत्र में प्रवेश कर उत्कर्ष के मार्ग पर बढ़ने की इच्छा रखने वालों के लिए जानने-समझने योग्य है।

स्थूल सत्ता पर सूक्ष्म के नियंत्रण का प्रमाण अंत:स्रावी ग्रंथियों—हारमोन्स के अदृश्य क्रिया-कलापों को माना जा सकता है। शरीर-विज्ञानी तो उनके रोगपरक असामान्य (पैथालॉजिकल) पक्ष को ही अधिक जानते व ऊहापोह करते दिखाई देते हैं। परंतु शरीर का यह रसायन शास्त्र और भी विलक्षण है एवं चेतना के स्तर को सामान्य से असामान्य की ओर ऊँचा उठाकर ले जाने वाली विद्या है। जब से भ्रूण का गर्भाशय में विकसित होना आरंभ होता है, तब से ही ये हारमोन्स गतिशील हो जाते हैं। यहाँ तक कि गर्भाशय में शुक्राणु के निषेचन एवं स्थापन के लिए आवश्यक विद्युतरासायनिक एवं संरचनात्मक कार्यवाही भी माता के हारमोन्स द्वारा संचालित होती है। आनुवंशिकता के माध्यम से संस्कारों के स्थानांतरण आदि की प्रक्रिया इसी समय संपन्न होती है। शरीर, मन, व्यक्तित्व, स्वभाव आदि का निर्धारण यहीं होता है।

जब सभी अंग-अवयवों रूपी वैभव से अभिपूरित जीवसत्ता अपना भ्रूणकाल पूरा कर कणों-प्रतिकणों एवं आयनमंडल से लिपटी बहिरंग दुनिया में प्रवेश करती है, तो नवीन परिवर्तनों, प्रतिकूलताओं से निपटने में यही सूक्ष्म रसस्राव अपनी भूमिका निभाते हैं। शरीर की आकृति, अंगों का विकास इत्यादि तो इन पर निर्भर हैं ही, प्राकृतिक रुझान-चिंतन-क्रिया-कलापों की डोर भी इन सूक्ष्म रस-स्रावों के मजबूत हाथों में है। पीनियल, पिट्यूटरी, थाइराइड, पैराथाइराइड, थाइमस, एडरीनल्स एवं गोनेड्स नाम से ये सात ग्रंथि समूह काया के शिखर स्थल से पेड़ू तक, उत्तरी ध्रुव से लेकर दक्षिणी ध्रुव तक विद्यमान होते हैं एवं शरीर के सभी जैव रासायनिक क्रिया-कलापों पर अपना कठोर नियंत्रण रखते हैं। यौन विकास, दृष्टिकोण का परिष्कार, पुंसकत्व एवं कामेच्छा पर नियंत्रण इन ग्रंथि समूहों के आधार पर ही बन पड़ता है। स्थूल स्तर की आहार-विहार की एवं बंध, मुद्रा, आसन जैसी सूक्ष्म काय संस्थान को प्रभावित करने वाली साधनाएँ हारमोन्स को सीधे प्रभावित कर उच्चस्तरीय साधना हेतु

अभीष्ट सक्षमता प्रदान करती हैं। बहिरंग की दृष्टि से कितना ही सुंदर, आकर्षक कोई क्यों न हो, जब तक उसके अंतरंग में सक्रिय रक्त में घुले हारमोन्स का स्तर नहीं बदला जाता, वह भावनात्मक एवं आत्मिक दृष्टि से अपरिपक्व ही रहेगा। शारीरिक अंगों की असमानता जो होगी, वह अलग से विद्यमान रहेगी।

एस्ट्रोकेमस्ट्री एवं कास्मोबायोलॉजी के विद्वानों ने ब्राह्मी चेतना का व्यष्टि चेतन से संबंध इन ग्रंथि समूहों के माध्यम से होना बताया है। वे सूर्य की पीनियल से, चंद्र की पिट्यूटरी से, मंगल की पैराथाइराइड से बृहस्पति की एड्रीनल्स से तथा शुक्र की गोनेड्स से संगति बिठाते हैं। यह कहाँ तक सही है, कहना कठिन है। किंतु यह स्पष्ट है कि व्यष्टि सत्ता समष्टिगत चेतना से निश्चित ही प्रभावित होती है एवं अपनी सामर्थ्य का बहुत सा अंश साधना उपादानों के माध्यम से इस अविज्ञात शक्ति समुच्चय से खींचती है।

जैव विद्युत एवं प्राणसंस्थान जिसे थियॉसाफी में 'इथरीक डबल' नाम दिया गया है, परस्पर गुँथे हुए हैं। हर जीवकोश, ऊतक एवं अंग-अवयव विद्युत शक्ति से अभिपूरित हैं। बाह्य जगत में फोटॉन कणों के प्रकाश की गति से चलने वाले कणों के रूप में परिकल्पना को अब प्रमाणित किया जा चुका है। ऐसे ही प्रकाशाणु शरीरसंस्थान की छोटी से छोटी इकाई न्यूक्लीय अम्लों से बने जीन्स हैं। सोडियम पंप के माध्यम से जीवकोशों का धन-ऋण आवेश बदलता व क्रमशः विद्युतसंचार होता चला जाता है। ए.डी.ए.टी.पी. सिस्टम एवं साइक्लिक ए.एम.पी. आदि ऐसे सूक्ष्म स्तर पर क्रियाशील विद्युतरासायनिक प्रक्रियाएँ हैं जो शरीर के अंग-प्रत्यंग में हो रही विभिन्न गतिविधियों के लिए उत्तरदायी हैं।

जैव विद्युत का उपापचय (इलेक्ट्रिकल मेटाबॉलिज्म) किस प्रकार होता है, इसकी एक झलक आज से बीस वर्ष पूर्व डॉ. फ्रेड ब्लेस द्वारा किए गए अध्ययन में दिखाई देती है। इस विश्लेषण के अनुसार हर जीवधारी वायुमंडल से ऋण विद्युत आइन्स श्वास द्वारा अंदर खींचता है। ये आइन्स सारे शरीर को विद्युतमय बना देते हैं। त्वचा के माध्यम से ये

फिर सारे वातावरण में फैल जाते हैं। यह एक प्रकार का विद्युतचक्र है। ऋण विद्युत फेंफड़ों द्वारा अवशोषित की जाती है एवं त्वचा द्वारा निष्कासित कर दी जाती है। आधुनिकतम उपकरणों ने अब इस जानकारी को और विशद बना दिया है। पीजो, पायरो एवं मेटाबॉलिक विद्युत के माध्यम से मनुष्य जैव विद्युत का एक पुंज, जीते-जागते बिजलीघर के रूप में देखा जा सकता है। शरीर के अनेकों ऊतक ऐसे विशिष्ट क्रिस्टल्स के रूप में कार्य करते देखे जा सकते हैं जो 'सॉलिड स्टेट फिजीक्स' में ट्रांसड्यूसर्स की भूमिका मानी जाती है। यह भी पाया गया है कि शरीर के हर कार्बनिक अणु में विद्युतसंधारण की क्षमता होती है। प्राणसंस्थान की इस विशेषता को अपवाद रूप में किसी व्यक्ति में अनायास ही जाग्रत होते देखा जा सकता है। किंतु साधना प्रक्रिया द्वारा शरीर स्थित प्राण-प्रवाह को जाग्रत एवं प्रचंड बना सकना संभव है। यह विद्युत ऊर्जा सामान्यतः चमक, ताजगी, उत्साह, स्फूर्ति के रूप में क्रियाशील देखी जा सकती है। प्रतिरोधी सामर्थ्य का मूल आधार यही जीवनीशक्ति है एवं सोऽहम् की हंसयोग साधना आदि द्वारा इस सामर्थ्य में अभिवृद्धि की जा सकती है। इसे साधक के रोम-रोम से फूटते इसे देखा जा सकता है। वाणी के माध्यम से जैव विद्युत सक्रिय होती एवं व्यक्तियों तथा वातावरण को प्रभावित करती है।

जैव चुंबकत्व एवं जैव विद्युत में अंतर इतना ही है कि दोनों भिन्न-भिन्न अवस्थाओं में क्रियाशील शरीर की शक्तियाँ हैं। जिनमें शरीर संचालन के अतिरिक्त बहिरंग को—वातावरण को प्रभावित करने की सामर्थ्य होती है। प्रभामंडल, आरा, साइकिक हीलिंग, प्राण प्रहार, पासिंग, गेजिंग, हिप्नोटिज्म, शक्तिपात जैव चुंबकत्व से संबंधित प्रक्रियाएँ हैं, जिन्हें योगीजनों द्वारा संपन्न करते देखा जाता है। हृदय के आस-पास जो चुंबकीय क्षेत्र बनता है उसे मैगनेटोकार्डियोग्राम द्वारा वैज्ञानिकों ने नापा व इसे ५×१०'' टेस्ला इकाई के समकक्ष पाया है। एक स्क्वीड नामक यंत्र के माध्यम से हर पल प्राण-प्रवाह द्वारा बदलती चुंबकीय धारा एवं क्षेत्र को अति सूक्ष्म मात्रा तक नापा जा सकता है। अब इसी यंत्र से मानवी काया के डाइपोल मैगनेट सुषुम्ना के दोनों ध्रुवों सहस्रार ब्रह्मरंध्र एवं

मूलाधार के आस-पास चुंबकीय क्षेत्र को भी मापा जा सकना संभव हो सका है। यह ध्यान देने योग्य तथ्य है कि उत्तरी ध्रुव पृथ्वी के दो ध्रुवों की तरह अवशोषण की एवं दक्षिणी ध्रुव निष्कासन की भूमिका निभाता है। अब एम.ई.जी. (मैगनेटोएनसेफेलोग्राम) के द्वारा यह भी देखा जा सकता है कि डी.सी. पोटेन्शियल्स के कारण कितना चुंबकत्व शिखा स्थान के आस-पास विद्यमान है। जैव चुंबकत्व ध्यानयोग के विभिन्न उपादानों के द्वारा बढ़ाया जा सकता है एवं यही मनोयोग की जाग्रति में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। ऐसी स्थिति तक पहुँचे साधक भाग्ययोग की उच्च कक्षा में प्रवेश करते हैं, साथ ही अपनी सम्मोहक सामर्थ्य से अन्यान्यों को प्रभावित करते, अपनी शक्ति का अंश सुपात्रों को देते हैं। एकाग्रता संपादन द्वारा वे उन कार्यों को अल्पायु में ही कुशलतापूर्वक कर लेते हैं, जो प्रतिभा, स्मरण शक्ति, संकल्प शक्ति से संबंधित हैं।

स्नायु रसायन मस्तिष्क एवं सुषुम्ना के नाड़ीसंस्थान में क्रियाशील वे रसस्राव हैं जो सक्रिय होने पर इंद्रियों में सीमाबद्ध मानसिक चेतना को अतींद्रिय स्तर तक पहुँचा देते हैं। 'न्यूरोह्यमरल सिक्रीशन्स' नाम से पहचाने जाने वाले ये रसस्राव वैज्ञानिकों द्वारा अभी-अभी जाने-पहचाने गए हैं किंतु इनकी प्रतिक्रियाओं का अतींद्रिय क्षमता के रूप में उभार शास्त्रवचनों एवं प्रतिपादनों में देखने को मिलता है। साधना का स्तर जैसे-जैसे सूक्ष्म प्रखर होता जाता है, उतनी ही ऊँची सीढ़ियाँ साधक चढ़ता चला जाता है। विज्ञानमयकोश जागरण की साधना ऐसी ही है, जो इन रसस्रावों से संबंधित है। डोपामीन, एसिटील कोलीन,गावा, सिरोटोनिन, एंडार्फिन्सएनकेफेलीन्स के रूप में विद्यमान ये स्नायु रसायन एकाग्रता, प्रसन्नता,भाव-प्रवणता, आनंदानुभूति, जाग्रति, स्फूर्ति, स्मरण शक्ति, मेधा इत्यादि विशेषताओं से संबंधित हैं। ध्यानयोग की उच्चस्तरीय साधनाएँ सीधे इनके रसस्राव को प्रभावित करती व साधक में उपरोक्त विशेषताओं को उभारती हैं। विभिन्न मुद्रा, बंध,आहार-विहार के नियमों व नियम ध्यानयोग की साधना में सहायक भूमिका निभाते हैं। अतींद्रिय सामर्थ्यों में विचार संप्रेषण, दूरश्रवण, दूरदर्शन,पदार्थ हस्तांतरण आदि अनेकों आती हैं पर इनका सुनियोजित उपयोग अध्यात्म क्षेत्र के जो साधक करते हैं, वे चमत्कारी प्रदर्शनों में स्वयं को उलझाते नहीं। वे इनको लौकिक प्रयोजनों

में नष्ट भी नहीं करते। स्नायुकोशों की जाग्रति के फलस्वरूप जो भी प्रतिक्रियाएँ होती हैं, वे उससे भलीभाँति अवगत होते एवं इस उपलब्धि का प्रयोग लोकोपयोगी प्रयोजन हेतु ही होने देते हैं। चेतना के चतुर्थ आयाम की यह वह स्थिति है, जिसमें विभूतियाँ अनायास ही हस्तगत हो जाती हैं। वैज्ञानिकों-मनीषियों के आविष्कारों-रचनाओं को इस संदर्भ में देखा जा सकता है।

चेतना का पाँचवां व अंतिम महत्त्वपूर्ण आयाम है—रेटीकुलर एक्टीवेटिंग सिस्टम एवं थेलिमिल कार्टिकिल न्यूकलाई के रूप में विद्यमान मस्तिष्क के ऊर्ध्व केंद्र पर अवस्थित आनंदमयकोश। इसके विषय में पहले भी बहुत कुछ कहा जा चुका है, परंतु जैसे-जैसे मेडिकल इलेक्ट्रोनिक्स ने प्रगति की है, मस्तिष्क के इस संस्थान के संबंध में जो चेतनता बनाए रखने के लिए उत्तरदायी माना जाता है, जानकारी और बढ़ी है। प्रायोगिक रूप से इलेक्ट्रोडों के माध्यम से उत्तेजित कर एवं न्यूरो हिस्टोपैथोलॉजी के माध्यम से सुषुम्ना के ऊर्ध्व भाग में स्थित इस विद्युत स्फुलिंग के फुहारे के विषय में जितना भी कुछ पता चला है, वह विलक्षण है। मस्तिष्क के विभिन्न कार्टीकल न्यूकलाई प्रसुप्त अचेतन को सचेतन एवं सुपर चेतन में परिवर्तित करने की क्षमता रखते हैं, बशर्ते उन्हें थेलेमोक प्रोजेक्शन के माध्यम से तंतुजाल से विनिर्मित 'रेटीकुलर एक्टीवेटिंग सिस्टम' उत्तेजन मिलता रहे। यह कार्य उच्चस्तरीय ध्यान साधना से संभव हो पाता है। निदिध्यासन, ध्यानधारणा, प्रत्याहार, समाधि की अवस्था में ये केंद्र जाग्रत होते एवं सूक्ष्म 'माइजेन' कणों एवं न्यूट्रीनो कणों के माध्यम से व्यष्टि चेतना का समष्टि चेतना से संपर्क स्थापित कर देते हैं। चेतना की सर्वोच्च स्थिति आनंदमयकोश के जागरण की स्थिति में आती है मस्तिष्क नहीं, मन में संव्याप्त चेतना के ऊर्ध्वीकरण का यह सोपान जब पूरा हो जाता है, पंचकोशी साधना समग्र हुई मानी जाती है।

यह सब कुछ जितने विज्ञानसम्मत ढंग से प्रतिपादित करने का प्रयास किया गया है, तथ्यतः प्रक्रिया उससे भी अधिक जटिल है। ब्रह्मरंध्र सहस्रार की स्थिति तक पहुँचने पर '**अयमात्मा ब्रह्म सच्चिदानन्दोऽहम्**' की जिस परिणति तक साधक पहुँच पाता है उसका वर्णन शब्दों में व्यक्त कर पाना संभव नहीं।

❐

काय ऊर्जा के विभिन्न पक्षों का वैज्ञानिक विश्लेषण

मनुष्य के शरीर के सूक्ष्म क्रिया-कलापों में से बहुसंख्य के ऊपर से अब परदा हट चुका है एवं प्रत्यक्ष क्रिया-कलापों के मूल में कार्य करने वाले ऊर्जा समुच्चय को अब विज्ञानसम्मत माना जाने लगा है। वैज्ञानिक जहाँ हतप्रभ हैं, वह है मनुष्य की परामनोवैज्ञानिक क्षमता, विचार ऊर्जा की परोक्ष सामर्थ्य एवं ऐसी असंभव प्रतीत होने वाली क्रियाएँ जिनका प्रत्यक्षत: कोई वैज्ञानिक आधार नहीं दिखाई देता। चूँकि इनका अस्तित्व है, उन्हें नकारा नहीं जा सकता। अत: उन्हें भी एक विद्या के अंतर्गत सम्मिलित कर रहस्यों की जाँच-पड़ताल जारी है। वैज्ञानिक प्रतिक्रिया को नहीं, प्रक्रिया को देखना चाहते हैं एवं यह जानकर सबको एक सुखद आश्चर्य होना चाहिए कि आज के बीसवीं सदी के आधुनिक युग में गुह्य विद्या पर कार्य करने वाले वैज्ञानिकों की संख्या पदार्थविज्ञानियों से कुछ कम नहीं, अधिक ही है।

गुह्य समझी जाने वाली अनेक परामनोवैज्ञानिक क्षमताओं में से एक है—'परामनश्चिकित्सा' अथवा 'साइकिक हीलिंग'। किसी में भी यह सामर्थ्य हो सकती है एवं किसी औषधि या स्थूल उपादान के रोगी को ठीक किया जा सकता है। इस पर गत तीन दशकों में काफी कुछ वाद-विवाद छिड़ चुका है। ऐसे अनेक व्यक्तियों की सामर्थ्य पर संदेह व्यक्त करते हुए वैज्ञानिकों ने जाँच-पड़ताल की है एवं इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि यह रहस्यमयी विधा अस्तित्व रखती है एवं अपवादस्वरूप कुछ व्यक्तियों में ऐसी विलक्षण सामर्थ्य भी पाई जाती है जिससे वे अपनी ऊर्जा का हस्तांतरण कर रोगियों को ठीक कर देते हैं।

पूर्वार्त्तदर्शन एवं मनोविज्ञान इसे चिकित्सा का रूप न देकर प्राण ऊर्जा के सामर्थ्य संपन्न व्यक्ति से अन्यों में स्थानांतरण की एक दैवी प्रक्रिया मानता है, जो अध्यात्म साधना के बलबूते कतिपय योगी महामानवों में विकसित होती देखी जाती है। इस मान्यता के अनुसार चिकित्सा तो

इस प्राण-प्रवाह की एक प्रक्रिया भर है। यह होती वस्तुतः एक उच्चस्तरीय प्रक्रिया है, जिसमें दैवी क्षमता संपन्न सिद्धसाधक सुपात्रों को अपनी ऊर्जा से लाभान्वित करते हैं। विशुद्धतः आध्यात्मिक उद्देश्यों के लिए उपलब्ध इस ऊर्जा समुच्चय की एक प्रतिक्रिया पदार्थपरक बहिर्मुखी भी हो सकती है किंतु वही सब कुछ नहीं है।

इस ऊँची स्थिति तक वैज्ञानिक न तो चिंतन कर पाए हैं और न वे ही इसे प्रतिपादित कर पाने की स्थिति में हैं किंतु मनश्चिकित्सा, फेथ हीलिंग, साइकिक हीलिंग जैसे पक्षों पर उन्होंने विचार अवश्य किया है व अनेकों महत्त्वपूर्ण निष्कर्ष भी निकाले हैं।

मांट्रियल की मैकिगल यूनिवर्सिटी के डॉ. बर्नार्ड ग्राड ने यह प्रमाणित करने का प्रयास किया है कि ऐसे व्यक्ति जिनमें यह क्षमता होती है, जब अपने हाथ में रखे फ्लास्क के जल को जौ के बीजों पर डालते हैं तो उनमें तुलनात्मक दृष्टि से काफी वृद्धि होती है, इसी जल को रोगियों को पिलाने पर वे ठीक होते देखे जाते हैं। उनका एक महत्त्वपूर्ण प्रतिपादन यह है कि यदि यही जल किसी अवसादग्रस्त मनःस्थिति वाले व्यक्ति द्वारा बीजों या अन्य रोगी पर आरोपित किया जाय तो इसकी प्रतिक्रिया निषेधात्मक होती है। इससे उन्होंने निष्कर्ष निकाला कि जो भी व्यक्ति 'साइकिक हीलिंग' की क्षमता रखता है, उसकी मनःस्थिति के अनुरूप ही प्राण ऊर्जा का स्थानांतरण होता देखा जाता है। यह प्राण ऊर्जा अंततः है क्या? इसका उत्तर देते हुए उन्होंने इसे 'एक्स फैक्टर' नाम दिया है। यह वह ऊर्जा है जो हर व्यक्ति में उसकी मनःस्थिति के अनुरूप न्यूनाधिक मात्रा में होती है। हीलिंग से लेकर प्रायोगिक परीक्षणों में यह एनर्जी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती देखी जा सकती है। बर्नार्ड ग्राड द्वारा 'सम बायोलॉजिकल इफेक्ट्स ऑफ लेयिंग ऑन हैंड्स' नाम से जनरल ए. एस. पी. खार के एप्रिल १९६५ में प्रकाशित इस प्रबंध में कहा गया है कि 'हीलर्स' के हाथ से निकली तीव्र आभायुक्त जिन प्रकाश तरंगों को डॉ. किर्लियन ने अपनी फोटोग्राफी में सेल्युलाइड पर अंकित किया है, वह यही 'एक्स एनर्जी' है।

इन दिनों यू.सी.एल.ए. के डॉ. थेल्मा मॉस एवं स्टेनफोर्ड विश्वविद्यालय के डॉ. टिलर के शोधों से प्राप्त निष्कर्ष उन्हें परामनोविज्ञान

की गुत्थियों में उलझाए हुए हैं। विल्गिटन डेलावेयर की डॉ. एडवर्ड ब्रेम ने 'हीलर्स' की उँगलियों से निस्सृत विद्युत से गुजरे जल का विश्लेषण कर यह पाया है कि सामान्य जल में सौ प्रतिशत हाइड्रोजन अणुसंयुक्त होते हैं, जबकि 'संस्कारित जल' में ९७.०४ प्रतिशत हाइड्रोजन बाइडिंग थी। इसका अर्थ यह हुआ कि निस्सृत विद्युत निश्चित ही जल की आणविक संरचना को तोड़कर उसे सूक्ष्मीकृत बना देती है। ऊर्जा इस जल से गुजरी है, इसका प्रमाण बदले हुए पृष्ठीय तनाव (सरफेस टेन्सन) से भी मिलता है। यह एक स्मरणीय तथ्य है कि जब भी यह दबाव कम होता है, जल की रोग निवारक-प्रतिरोधी-भेदक क्षमता बढ़ जाती है। डॉ. मिलर ने टेन्सियोमीटरों का प्रयोग इस प्रयोजन हेतु किया गया था जिससे किसी प्रकार की शंका-गुंजाइश नहीं रह जाती।

साइंस डाइजेस्ट (मई १९८२) में प्रकाशित एक शोध प्रबंध में एक महत्त्वपूर्ण अध्ययन प्रस्तुत किया गया है, जिससे इस साइकिक ऊर्जा पर प्रकाश पड़ता है। मेनिंजर फाउंडेशन टोपे का कन्सास के जैव मनोविज्ञानी डॉ. एल्मर ग्रीन एवं पेन एंड हैल्थ रिहेविलीटेशन सेंटर विस्कान्सिन के डॉ. सी नारमन ने परामनश्चिकित्सकों के मानवी फिजियोलॉजी पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन कर कुछ निष्कर्ष निकाले हैं। लंबी व्याधि से पीड़ित रोगी जिनके विभिन्न संस्थान रोगग्रस्त थे, इन प्राण चिकित्सकों के संपर्क में लाए गए। उनके हाथ रखने एवं ध्यानस्थ होने पर रोगियों की हृदय एवं श्वसन दर, मस्तिष्क की विद्युत तरंगें, तापक्रम, त्वचा प्रतिरोध एवं रोगनिरोधी कोशाणुओं में विलक्षण परिवर्तन देखा गया। रोगियों से उनके अनुभवों के विषय में पूछा गया तो उन्होंने कहा कि उन्हें लगा मानो दिव्य ऊर्जा प्रवाह उनके अंदर प्रवेश कर गया हो। किसी-किसी को बिजली के तेज झटके से लगे। इस प्रयोग के बाद ८० प्रतिशत रोगियों के दरद व अन्य लक्षणों में कमी देखी गई। कई पूर्णतः रोगमुक्त हो गए।

वस्तुतः यह क्षमता हर मनुष्य में विद्यमान है। दैनंदिन जीवन में हम देखते हैं कि जिस चिकित्सक पर अमुक रोगी का विश्वास होता है, वह

उसकी दी हुई किसी भी औषधि से आरोग्य लाभ प्राप्त कर लेता है जबकि उसी चिकित्सक पर अन्य रोगी का विश्वास न होने से वही रोग व लक्षण होते हुए भी चिकित्सा कारगर नहीं होती। प्राण विद्युत, संकल्पबल, विश्वास की शक्ति परस्पर अन्योन्याश्रित संबंधित है। चाहे उसका प्रयोग रोग निवारण हेतु किया जाय अथवा आत्मबल बढ़ाने हेतु, हर किसी के लिए उसकी प्रचंड मात्रा अपने ही अंदर विद्यमान है। यह बात अलग है कि अपवाद रूप में कुछ में वह अधिक मात्रा में होती व अपने परिणाम प्रत्यक्षत: दिखाती है। महामानवों में यही ऊर्जा भांडागार विपुल मात्रा में होता है। स्पर्श, अभिसिंचित जल एवं दृष्टिपात द्वारा भी वे मानव समुदाय में इसे वितरित करते देखे जाते हैं। साइकिक हीलिंग से लेकर इस ऊर्जा वितरण तक हरेक के मूल में एक ही शक्ति काम करती है। वैज्ञानिक उसे कुछ भी रूप दे दें, उसका अस्तित्व तो नकारा नहीं जा सकता।

प्राणशक्ति का अब नया उपयोग चिकित्सा प्रयोजन में भी होने लगा है। समर्थ व्यक्ति की प्राणशक्ति दुर्बल को उसी प्रकार दी जा सकती है जैसे कि संपन्न लोग अपने वैभव से निर्धनों, अभावग्रस्तों की सहायता करते हैं।

प्राचीनकाल में प्राणदान, शक्तिपात आदि अनुदानों का वर्णन मिलता है। गुरुजन अपने शिष्यों को उत्तराधिकार में बहुत कुछ देते रहते हैं। दुर्बलों और पीड़ितों की सहायता के लिए भी अपनी इस पूँजी में से बहुत कुछ बाँटने की उदारता उन्होंने दिखाई है। यह वे अनुदान हैं, जिनके अंत:करण में संचित पूँजी का भी आदान-प्रदान संभव होता था।

इन दिनों उस प्रक्रिया का उपयोग हलके रूप में होने लगा है। मैस्मेरिज्म सिद्धांतों के आधार पर की जाने वाली प्राण चिकित्सा को इसी स्तर का माना जा सकता है। उसमें मात्र शरीरगत विद्युत प्रवाह का आदान-प्रदान होता है। उसमें ग्रहणकर्त्ता को अधिक लाभ होता है पर प्रदाता को कोई अधिक घाटा भी नहीं सहन करना पड़ता, क्योंकि दैनिक जीवन के विभिन्न कार्यों में इस विद्युत का निरंतर व्यय होता रहता है। चिकित्सा प्रयोजन में इतना ही करना पड़ता है कि प्राण विद्युत का कुछ समय तक बिखराव रोकना पड़ता है और एकाग्रता तथा संकल्प शक्ति के

सहारे उसे दुर्बल व्यक्ति को देना पड़ता है। इसे शारीरिक स्तर पर मोटा अनुदान कह सकते हैं।

सम्मोहन विद्या का वशीकरण, मूर्च्छा प्रयोग आदि के रूप में प्रचलन तो पहले भी था। योग एवं तंत्र ग्रंथों में इसका विशद वर्णन भी मिलता है पर उसे व्यवस्थित चिकित्सा के रूप में प्रचलित करने का श्रेय आस्ट्रिया निवासी डॉक्टर फ्रांसिस्कम एंटीनियर्स मेस्मर को है। उन्होंने मानवी विद्युत का अस्तित्व, स्वरूप और उपयोग सिद्ध करने में घोर परिश्रम किया और उसके आधार पर कठिन रोगों के उपचार में बहुत ख्याति कमाई। वे अपने शरीर की प्राण ऊर्जा का रोगियों पर आघात करने के साथ ही लौह चुंबक भी आवश्यकतानुसार प्रयोग में लाते। इस दोहरे प्रयोग से न केवल शारीरिक वरन मानसिक रोगों के उपचार में भी उनने आशातीत सफलता प्राप्त की। इसे उन्होंने 'मेस्मेरिज्म' नाम दिया। आगे चलकर मि. कॉस्टेट युसिगर ने उसमें सम्मोहन विज्ञान की नई कड़ी जोड़ी और कृत्रिम निद्रा लाने की विधि को 'हिप्नोटिज्म' नाम दिया। फ्रांस के अन्य विद्वान भी इस दिशा में नई खोजें करते रहे। चिकित्सक ला फांटेन एवं डॉ. ब्रेड ने इन अन्वेषणों को और आगे बढ़ाकर इस योग्य बनाया कि चिकित्सा उपचार में उसका प्रामाणिक उपयोग संभव हो सके।

कुछ दिनों पूर्व अमेरिका में न्यू आरलीयन्स तो ऐसे प्रयोगों का केंद्र ही बना रहा है, जहाँ इस विज्ञान को अमेरिकी वैज्ञानिक डारलिग और फ्रांसीसी वैज्ञानिक डॉ. दुरांड डे ग्रास की खोजों ने विज्ञान जगत को यह विश्वास दिलाया कि प्राणशक्ति का उपयोग अन्य महत्त्वपूर्ण उपचारों से किसी भी प्रकार कम लाभदायक नहीं है। इस प्रक्रिया को 'इलेक्ट्रोबायोलॉजिकल साइंस' नाम दिया गया है। 'दि स्कूल ऑफ नेन्सी', दि स्कूल ऑफ चारकोट, 'दि स्कूल ऑफ मेस्मेरिज्म' नामक संस्थाओं ने इस संदर्भ में महत्त्वपूर्ण शोध कार्य किए हैं। इनके अतिरिक्त भी छोटे-बड़े अन्य शोधसंस्थान सम्मोहन चिकित्सा पर अनुसंधानरत रहे हैं।

मूर्द्धन्य वैज्ञानिक डॉ. एम.ओ. माल तथा जे.एम. वैंब्रेल ने अपनी पुस्तक 'हिप्नोटिज्म' में सम्मोहन चिकित्सा की अनेकों प्रामाणिक घटनाओं का वर्णन किया है। 'इमोशन्स एंड बॉडिली चेंजेज' नामक अपनी प्रसिद्ध

पुस्तक में लेखिका एच.एफ. डनवार ने लिखा है—"इस विद्या द्वारा हर प्रकार की हिस्टीरिया, फोबिया, स्नायविक बीमारियाँ, वाणी का असंतुलन, हकलाना आदि का सफल उपचार संभव है।" डॉ. विन के अनुसार "मानसिक रोगों के उपचार में वैज्ञानिक हिप्नोटिज्म का सफल स्तर पर प्रयोग हुआ है।"

अमेरिका के सुप्रसिद्ध चिकित्सक डॉ. आर्नोल्ड फॉस्ट ने सम्मोहन विधि से निद्रित करके कई रोगियों के छोटे ऑपरेशन किए थे। पीछे डेंटल सर्जनों ने यह विधि अपनाई और उन्होंने दाँत उखाड़ने में सुन्न करने के प्रयोग बंद करके सम्मोहन विधि प्रयोग को सुविधाजनक पाया। दक्षिण अफ्रीका-जोहन्सवर्ग के टारा अस्पताल में डॉ. वर्नर्ड लेविन्सन ने बिना एनेस्थीसिया के इसी विधि से कितने ही कष्टरहित आपरेशन करके यह सिद्ध किया कि यह विधि कोई जादू-मंतर नहीं वरन विशुद्धतः वैज्ञानिक है। वैज्ञानिक जेम्स ब्राइड ने भी नाड़ीसंस्थान में पाई जाने वाली विद्युत शक्ति की क्षमता को मात्र शरीर-निर्वाह तक सीमित न रहने देकर उससे अन्य उपयोगी कार्य संभव हो सकने का प्रतिपादन किया है।

प्रसूति में भी हिप्नोटिज्म का प्रयोग सफल रहा है। इस दिशा में अनेक मेडिकल अधिकारियों के नाम उल्लेखनीय हैं। इनमें डॉ. वान ओटीजर, डॉ. जे. रैफ्लर, शूल्ज तथा डॉ. मार अति प्रसिद्ध हैं। इन चिकित्सा विशेषज्ञों ने बिना वेदना के प्रसव कराने में आशातीत सफलता पाई। कई महिलाएँ, जिनकी प्रसूति पहले ऑपरेशन से हुई थी, इस विधि द्वारा सहज रूप से संपन्न हो गई। डॉ. विन के अनुसार जिस परिमाण में सम्मोहनकर्त्ता के प्रति सम्मान तथा रोगी का विश्वास होगा, उसी मात्रा में वह लाभान्वित हो पाएगा।

प्रख्यात वैज्ञानिक मोडाट्रियूज तथा काउंट पुलीगर ने अपने अनुसंधानों के आधार पर यह सिद्ध किया है कि प्राणशक्ति द्वारा रोग उपचार तो एक हलका सा प्रयोग मात्र है। वस्तुतः उसके उपयोग बहुत ही उच्च स्तर के हो सकते हैं। उसके आधार पर मनुष्य अपने निज के व्यक्तित्व में बहुमुखी प्रतिभा उत्पन्न कर सकता है। प्रतिभाशाली बन सकता है। आत्मविकास की अनेक मंजिलें पार कर सकता है, पदार्थों को प्रभावित करके अधिक

उपयोगी बनाने तथा इस प्रभाव से जीवित प्राणियों की प्रकृति बदलने के लिए भी प्रयोग किया जा सकता है। जर्मन विद्युतविज्ञानी रीकन बेक इसे एक विशेष प्रकार की 'अग्नि' मानते हैं। उसका बाहुल्य वे चेहरे के इर्द-गिर्द मानते हैं और 'हीलिंग ऑरा' नाम देते हैं। प्रजनन अंगों में उन्होंने इस अग्नि की मात्रा चेहरे से भी अधिक परिमाण में पाई है। दूसरे शोधकर्त्ताओं ने नेत्रों तथा उँगलियों के पोरुवों में उसका अधिक प्रवाह माना है।

प्राणशक्ति के वैज्ञानिक अनुसंधान के क्षेत्र में अभी प्राथमिक जानकारियाँ ही उपलब्ध हो सकी हैं। उसके थोड़े से सूत्र निर्धारित किए गए हैं और यत्किंचित उपयोग-उपचार जाने गए हैं। आत्मविज्ञानी मानवी चेतना में सन्निहित संकल्पशक्ति, इच्छाशक्ति, वेधक दृष्टि सम्मोहन रूपी इस अद्‌भुत सामर्थ्य की गरिमा आरंभ से ही गाते रहे हैं और कहते रहे हैं कि जो प्राणविद्या को जान लेता है, उसके लिए इस संसार में कुछ भी अनुपलब्ध नहीं रह जाता जो समृद्धि, प्रगति और सुख-शांति के लिए आवश्यक है। ❒

शक्तिपात और उसका आधार

सत्संग और कुसंग के भले-बुरे परिणामों से सभी अवगत हैं। इसमें कुछ भाग तो कथन परामर्श का भी रहता है और कार्यपद्धति के अवलोकन का भी। किंतु अधिक प्रभाव व्यक्तित्व का रहता है जो प्रकाश की तरह अपने संपर्क क्षेत्र पर अपनी छाप छोड़ता है। अग्नि के समीप जाने पर उसकी गरमी एक परिधि तक स्वयमेव पहुँचती है। इसके लिए यह आवश्यक नहीं है कि उसका स्पर्श आवश्यक हो। पुष्पों की सुगंध और कूड़े-करकट की सड़न का एक दायरा बन जाता है और उसका प्रभाव सहज ही उन लोगों तक पहुँचता है जो उस परिधि में होते हैं। आग में मिर्च जलाए जाने पर उससे छींकें आने और खाँसी उठने का सिलसिला दूर-दूर तक उठता दिखाई देता है। हर व्यक्ति का अपना एक प्रभावक्षेत्र होता है और वह बिना कुछ कहे भी एक आदान-प्रदान का क्रम चला देता है। सत्संग और कुसंग का प्रभाव मात्र वातावरण से भी संभव है।

मनुष्य के शरीर के चारों ओर एक तेजोवलय होता है, उसे यंत्रों की सहायता से प्रकाशयुक्त भाप की तरह देखा जा सकता है। इसके साथ जुड़े रहने से विद्युत कण आगे-आगे उड़ते रहते हैं और सामर्थ्य के अनुरूप समीपवर्ती व्यक्तियों पर ही नहीं पदार्थों पर भी छाप छोड़ते हैं। इस प्रसंग में निकटता का और भी अधिक महत्त्व है। कमजोर पक्ष पर समर्थ पक्ष अनायास ही छा जाता है।

बच्चों को जिन बड़े व्यक्तियों के साथ रहने, गोदी में चढ़ने या खेलने का अवसर मिलता है। उनका स्वभाव तदनुरूप ढलना आरंभ हो जाता है इसलिए उन्हें यदि सुसंस्कारी बनाना है तो अनुपयुक्त व्यक्तियों के सान्निध्य से यथासंभव बचाया ही जाना चाहिए।

यह प्राण ऊर्जा उन पदार्थों में भी घुस पड़ती है जो व्यक्ति विशेष के संपर्क में आते हैं। वस्त्र, छड़ी, कलम, माला आदि जो वस्तुएँ अधिक समय तक जिस किसी के साथ रहती हैं, उसका प्रभाव ग्रहण कर लेती हैं और फिर जिनके भी पास जाती हैं उन्हें प्रभावित करती हैं।

नारी और नर में यह चुंबकत्व विशेष रूप से काम करता है। नारी में आकर्षण और पुरुष में विकर्षण स्तर का चुंबकत्व होता है, जो निकटता होने पर अपनी चुंबकीय ऊर्जा का हस्तांतरण करने लगता है।

अध्यात्म साधकों को ब्रह्मचर्य की शिक्षा दी जाती है और कहा जाता है कि वे विपरीत लिंग के साथ घनिष्ठता न बनाएँ। यथासंभव अधिक से अधिक दूरी बनाए रहें। विशेषतया दृष्टि न मिलाएँ क्योंकि चुंबकत्व की मात्रा उनके माध्यम से अपना गहरा प्रभाव छोड़ती है। यौनाचार में तो जननेंद्रियों का ही नहीं, प्राण ऊर्जा का भी पारस्परिक घुलन-मिलन और आदान-प्रदान एक सीमा तक होता है। दोनों ही पक्ष एकदूसरे के साथ मिलकर व्यक्तित्वों के स्तर में एक आश्चर्यजनक परिवर्तन करते हैं। इतना ही नहीं, बहुधा भ्रूण स्थापित होने और दोनों के संयोग का प्रतिफल एक नए व्यक्ति का जन्म होने तक भी जा पहुँचता है।

व्यभिचार का प्रतिबंध आध्यात्मिक दृष्टिकोण से भी किया गया है क्योंकि उसमें नर पक्ष अधिक घाटे में रहता है, अपनी प्राण ऊर्जा का एक अंश गँवा बैठता है। साथ ही नारी पक्ष का चुंबकत्व अनायास ही उससे बहुत कुछ अपहरण करके स्वयं तो लाभान्वित रहता है और अपने बहुत दोष-दुर्गुण नारी पक्ष में छोड़ देता है। ऐसे ही रहस्यम कारणों से पतिव्रत एवं पत्नीव्रत मर्यादाओं के अनुशासन पालन पर अंकुश लगाया गया है। विशेषतया आत्मिक प्रगति को लक्ष्य मानकर समर्थ पक्ष अपनी अध्यात्म संपदा को हस्तांतरित करते समय यह विशेष रूप से परखता है कि कहीं अपनी बहुमूल्य संपदा को किसी कुपात्र के कीचड़ जैसे व्यक्तित्व पर तो नहीं उड़ला जा रहा है। इसके लिए पात्रता का विशेष रूप से ध्यान रखना पड़ता है। अन्यथा उस उपलब्धि का दुरुपयोग होने पर ग्रहणकर्त्ता को ही नहीं देने वाले को विशेष रूप से सतर्क किया गया है।

अध्यात्म क्षेत्र में इसी प्रक्रिया का आदान-प्रदान उच्चस्तरीय भूमिका पर गुरु-शिष्य के बीच भी होता है। गुरु अपनी संग्रहीत प्राण ऊर्जा का एक बड़ा भाग कारण विशेष के निमित्त शिष्य के लिए भी हस्तांतरित कर सकता है। इस प्रक्रिया को शक्तिपात कहते हैं। इसमें भी संकट उठाना पड़ता है और भस्मासुर जैसी स्थिति बन पड़ती है। विभूति वरदान को पचा न पाने के कारण भस्मासुर तो बेमौत मरा ही। शंकर-पार्वती ही नहीं,

विष्णु भगवान तक को उस कारण हैरान होना पड़ा। विवेकानंद, दयानंद आदि की निज की साधना उतनी नहीं थी, उन्हें गुरु पक्ष से जो असाध्य अनुदान मिले उनके कारण वे इतना कुछ कर सके जितना एकाकी पुरुषार्थ से कदाचित वे न कर पाते।

प्राचीनकाल के गुरुकुलों की एक विशेषता यह भी थी कि वे अध्ययन करने वाले छात्रों में से सभी की पात्रता परखते रहते थे और उनमें से जो जिस प्रकार की जितनी प्राण ऊर्जा का अनुदान प्राप्त करने का अधिकारी होता था, उसे उतना देकर उन्हें निहाल करने में कृपणता नहीं बरतते थे। किंतु साथ ही यह भी अनुशासन निर्धारित करते थे कि इस अनुदान का उपयोग लिप्सा, तृष्णा, अहंता की पूर्ति जैसे क्षुद्र प्रयोजनों के लिए न किया जाय। उस सामर्थ्य के सहारे कहीं, कोई अनीतिपरक दुष्कर्म न किया जाय। ऐसी दशा में उस अनुदान देने वाले को भी दंड भुगतना पड़ता है कि क्यों उसने पात्रता परखे बिना-उपलब्धि का उद्देश्य जाने बिना क्यों देने में उतावली बरती ? कोई अपनी बंदूक किसी अनाड़ी के हाथ सौंप दे और उसे पाकर वह किसी को मौत के घाट उतार दे या धमकाकर लूट-पाट करे तो इस अनर्थ में वह व्यक्ति जिसने बंदूक के अनुपयुक्त प्रयोग की आशंका का अनुमान लगाए बिना देने वाला व्यक्ति भी अपराधी बनता है और उसे भी आक्रमणकारी की सहायता करने का दंड भुगतना पड़ता है। शक्तिपात के संबंध में यह सतर्कता भी रखी जाती है। जिनके पास इस प्रकार का भंडार है, वे उसे प्रायः प्रकट करने से कतराते हैं ताकि कोई धूर्त-चापलूस झूठ-मूठ भक्तिभाव दिखाकर या झूठे आश्वासन देकर उनकी सज्जनता का अनुचित लाभ न उठा ले।

जहाँ सामर्थ्य के अभाव में कोई उच्चस्तरीय कार्य रुकता है, वहाँ उस कार्य को बिगड़ने न देने के लिए बिना माँगे भी महान आत्माएँ अपनी शक्ति का एक बड़ा भाग उन सत्पात्रों को अनायास ही सौंप देती हैं। ऐसा भी होता है कि कोई महान कार्य कराने के लिए कोई उच्च आत्मा किसी सत्पात्र को आग्रहपूर्वक ही ऐसा अनुदान हस्तांतरित करे। शिवाजी और चंद्रगुप्त ने बिना मांगें ही किसी उच्च प्रयोजन के निमित्त ऐसा अनुदान उपलब्ध किया था।

जो लोग शक्तिपात कर सकने की क्षमता का विज्ञापन करते हैं, उनमें से कदाचित ही कोई इस योग्य होता हो। जो कर सकते हैं वे अकारण जहाँ-तहाँ चर्चा नहीं करते अन्यथा जेब का पैसा बार-बार दिखाने वाले को कोई जेबकट सहज ही चकमा दे सकता है।

जिस प्रकार पिता अपनी संपदा का उत्तराधिकार अपनी प्रिय संतान को दे जाता है उसी प्रकार आत्मबल के धनी, योगी, तपस्वी भी अपने शिष्यों को शक्ति का अनुदान देते हुए आनाकानी नहीं करते। किंतु यह मूलत: पात्रता पर आधारित विज्ञान है।

प्राण उपार्जन यों निजी संपदा है, पर कोई उदारचेता अपनी कमाई का कुछ अंश किसी दूसरे को भी हस्तांतरित कर सकते हैं। इसी को अध्यात्म की भाषा में शक्तिपात कहा गया है। लोक-व्यवहार में जिस प्रकार धनी लोग जरूरतमंदों को दान देते रहते हैं, उसी प्रकार दुर्बल प्राण व्यक्तियों को सशक्त प्राण वाले अपनी अध्यात्म संपदा का उपयुक्त भाग दान करते हैं। इस उपलब्धि के सहारे वे अपने कष्ट से छूटते हैं और अभीष्ट आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु एक कारगर सहायता प्राप्त करते हैं।

शक्तिपात के संबंध में योगचूड़ामणि, तेज बिंदूपनिषद ज्ञान संकलिनी तत्त्व, हठयोग संहिता, रुद्रयामल यंत्र, योग कुंडल्युपनिषद् शारदा तिलक आदि ग्रंथों में विस्तृत वर्णन है। यह प्रबल प्राण वाले व्यक्ति द्वारा अपनी सामर्थ्य दूसरे के लिए हस्तांतरित करने के सदृश है। उधार या दान में किसी को पैसा दिया जा सकता है। उसी प्रकार निकट सान्निध्य में यह शक्ति स्वयं भी अधिकारी लोगों की ओर चलने लगती है अथवा प्रयत्नपूर्वक चलाई जा सकती है।

जलते चूल्हे के पास बैठने पर शरीर गरम होने लगता है। इसी प्रकार इस शक्ति की समीपता अपेक्षित होती है। नर और नारी के बीच यह आकर्षण-विकर्षण अनायास ही काम करने लगता है। इसीलिए योगीजन अपनी सामर्थ्य को सुरक्षित रखने के लिए स्त्रीसेवन या संपर्क से यथासंभव दूर रहते हैं। मित्रता की घनिष्ठता से भी यह प्रवाह बढ़ जाता है। इसलिए कुसंस्कारी के साथ रहना भी आध्यात्मिक दृष्टि से घाटे का सौदा है। किंतु यदि स्वेच्छापूर्वक किसी को ऊँचा उठाने या आगे बढ़ाने

के लिए यह अनुदान दिया जाय तो दूसरी बात है। पर उसमें भी इतना विवेक तो रखना ही पड़ता है कि उपलब्धकर्त्ता कहीं उसका उपयोग अनर्थ प्रयोजनों में न करने लगें। ऐसी दशा में जो दिया गया है, वह वापस भी लौटाया जा सकता है।

देखने में आता है कि कितने ही व्यक्तियों को दूसरों के भेजे संदेश मिल जाते हैं। स्वप्न में तथा दूसरे प्रकार से भी निर्देशन प्राप्त हो जाते हैं। इसके लिए उपलब्धिकर्त्ता को अपना चित्र एकाग्र करने का अभ्यास होना चाहिए। आकाश में बिखरी अनेकानेक तरंगों में से वह अपने काम की तरंगें पकड़ लेता है और ऐसा अभ्यास प्राप्त कर लेता है जिसे आश्चर्यजनक कहा जा सके।

कई लोगों में भविष्य कथन की, दूसरों के विचार या क्रिया-कलाप जानने की, भूतकाल में गुजरी घटनाओं की जानकारियाँ बता देने की क्षमता होती है, उन्हें अदृश्य आत्माओं के संदेश या संकेत आते हैं। किसी की बीमारियों या कठिनाइयों का समाधान बता सकते हैं या कर सकते हैं। जमीन में या तिजोरियों में क्या है? इसका विवरण बता सकते हैं।

इनमें अनेक लोग ऐसे हैं जिनने कोई विशेष साधना नहीं की है। इसका कारण तलाश करने पर पता चलता है कि या तो उनने पहले जन्मों में कोई कठिन साधना की है और उसका प्रभाव अभी तक बना हुआ है। इसके अतिरिक्त एक कारण यह भी है कि एकाग्रता इस स्तर की विकसित हो कि उसके सहारे अतींद्रिय क्षमताएँ काम करने लगें अथवा ऐसे कल्पना चित्र उभरने लगें जो यथार्थता के समतुल्य हैं। जिनने कोई साधना नहीं की है फिर भी उनमें चमत्कारी क्षमता मौजूद है तो उपरोक्त प्रसंगों में से कुछ न कुछ विलक्षण उनके साथ अवश्य घटित हुआ होता है। बिना कारण किसी में चमत्कारी क्षमताओं का उद्भव होना संभव नहीं।

यह सच है कि शक्तिपात के आधार पर उच्चस्तरीय सफलताएँ अर्जित की जा सकती हैं, पर न्यास और नीति का तकाजा यह है कि मुफ्त में किसी से कुछ न लिया जाय। शक्ति लेने के बदले में भक्ति तो देनी ही चाहिए।

मुद्रक—युग निर्माण योजना प्रेस, मथुरा (उ. प्र.)